॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

लघुजातकम्

भाषाटीकासमेतम् ।

मंगलाचरणम् ।

यस्योदयास्तसमये सुरमुकुटनिघृष्टचरणकमलोऽपि ॥
कुरुतेऽञ्जलिं त्रिनेत्रः स जयति धाम्नां निधिः सूर्यः॥१॥

करेणुवक्त्रोत्तविभूतिरेणुं स्वरेण संवादितवाद्यवेणुम् ॥
गोविन्दसंवंद्यपदारविन्दं वन्दे शिवं देवममन्दमूर्तिम् ॥ १ ॥

दोहा—भजि गणपति गिरिजा गिरा, गुरुपदपद्म पखारि ॥
विरच्यौ लघुजातकतिलक, जगउपकार विचारि ॥ १ ॥

शास्त्रके प्रारम्भ करनेवाले शास्त्रके आरम्भमें इष्टदेवको प्रणाम करते हैं:—क्योंकि श्रेष्ठ पुरुषोंका यही आचरण है। तिसी कारण यह आवन्तिकाचार्य वराहमिहिरजी सूर्य भगवान्से वरप्रसाद पाकर ज्योतिषशास्त्रको इकट्ठा कर संक्षेपपूर्वक होराशास्त्रके कहनेको उद्यत हो, समस्त विघ्नोंकी शान्तिके लिये प्रथम इष्टदेव सूर्य भगवान्को प्रणाम करते हैं। सो (धाम्नां निधिः) अर्थात् दिव्य गोंकी निधि सूर्य भगवान् ही सर्वोत्कर्षताकर वर्तें हैं। जिन कालबल नैसर्गिक उदय और अस्तके समयमें देवतोंके मुकुटोंसे स्पर्श किये हैं स्थानबल कमल जिनके ऐसे त्रिनेत्र महादेवजी भी हाथ जोडकर प्रणाम दृष्टिबल हैं। भाव यह कि—जिन महादेवको समस्त इंद्रादिक देवता मित्रबल र मुकुट धर प्रणाम करते हैं, सो महादेवजी भी इंद्रादिक पंचधा हित सदैव सूर्य भगवान्को प्रणाम करते हैं; क्योंकि सूर्यस्व को राजा प्रणाम करता है उसको समस्त सेवकगण भी चंद्रस्व ते हैं ॥ १ ॥

होराशास्त्रं वृत्तैर्मया निबद्धं निरीक्ष्य शास्त्राणि ॥
यत्तस्याप्यार्याभिः सारमहं संप्रवक्ष्यामि ॥ २ ॥

शास्त्रोंको देखकर पहिले मुझ वराहमिहिरने नाना प्रकारके छन्दोंकर जो होराशास्त्र रचा है, अब उसीके सारांशको आर्यानाम छन्दोंपर कहूंगा । भाव यह है कि, पहिले मैंने अनेक शास्त्र देख कर समस्त जगत्का उपकार विचार बहुत विस्तारसे होराशास्त्र रचा, परन्तु उसमें सारग्राही पुरुषोंकी अप्रवृत्ति देख अब सारांशरूप जातक निकालकर प्रगट करूंगा । जैसे घृतके चाहने वाले दुग्धको मथनकर घृत निकालते हैं ॥ २ ॥

ग्रंथप्रयोजनम् ।

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाशुभं तस्य कर्मणःप्राप्तिम् ॥
व्यंजयति शास्त्रमेतत्तमसि द्रव्याणि दीप इव ॥ ३ ॥

यदि कहो कि इस होराशास्त्रसे मनुष्योंका क्या उपकार होता है जिससे आप बहुधा बार २ परिश्रम कर ग्रन्थ रचते हो, तहां कहते हैं–प्राणियोंका जो अन्य जन्मके विषे शुभ अशुभ कर्म इकट्ठा हुआ है उस कर्मकी प्राप्तिको यह शास्त्र प्रगट करता है । भाव यह है कि जो पूर्वजन्मका शुभ अशुभ कर्म है, उस कर्मके शुभ अशुभ फलके समयको यह शास्त्र जानता है । जैसे दीपक अन्धकारमें विद्यमान द्रव्योंको प्रकट करता है ॥ ३ ॥

कालनरस्यावयवान् पुरुषाणां चिंतयेत्प्रसवकाले ॥
सदसद्ग्रहसंयोगात्पुष्टाः सोपद्रवास्ते च ॥ ४ ॥

कालपुरुषांगभागः ।

इसके अनन्तर कालपुरुषके मेषादिक राशिपूर्वक अंग विभाग कहते हैं:–पुरुषोंके जन्मसमयमें कालनरके अंगोंको विचारे वह अंग शुभ अशुभ ग्रहोंके संयोगसे पुष्ट और उपद्रवसहित कहे ॥ ४ ॥

शीर्ष १ मुख २ बाहु ३ हृदयो ४ दराणि ५ कटि ६ बस्ति ७ गुह्यसंज्ञानि ८॥ ऊरू ९ जानू १० जंघे ११ चरणा १२ विति राशयोऽजाद्याः॥ ५॥

शिर, मुख, भुजा, हृदय, पेट, कमर, बस्ति, अर्थात् नाभिसे नीचेका भाग, गुह्य अर्थात् लिंग, दोनों ऊरु, दोनों जानु, दोनों जंघा, दोनों चरण ये क्रमसे मेषादिक राशि हैं, अर्थात् कालपुरुषका मेष शिर, वृष मुख, मिथुन दोनों भुजा, कर्क हृदय, सिंह पेट, कन्या कमर, तुला नाभिसे नीचेका भाग, वृश्चिक लिंग, धनु दोनों ऊरु, मकर दोनों जानु, कुम्भ दोनों जंघा, मीन दोनों पांव हैं। जिस राशिपर शुभ ग्रह बैठा हो और वह राशि जिस अंगसंबन्धी हो उसी अंगको पुष्ट सुन्दर कहे और जिसपर पापग्रह स्थित हो उस राशिसंबन्धी अंगको क्षीण तथा रोगयुक्त कहे॥ ५॥

राशिवर्णज्ञानम्।

अरुणसितहरितपाटलपांडुविचित्राः सितेतरपिशंगौ॥ पिंगलकर्बुरबभ्रुकमलिना रुचयो यथासंख्यम्॥ ६॥

इसके अनन्तर राशियोंका वर्णज्ञान कहते हैं:-मेषादिक राशियोंके यथाक्रम ये वर्ण हैं। जैसे मेषका लाल, वृषका श्वेत, मिथुनका हरा, कर्कका पाटल अर्थात् कुछ लाल श्वेत मिला भया, सिंहका पांडु अर्थात् कुछ श्वेत पीला मिला भया, कन्याका चित्र विचित्र, तुलाका काला, वृश्चिकका पिशंग अर्थात् सुवर्णके समान, धनुका पिंगल कुछ लाल पीला मिला भया, मकरका कबरा, कुम्भका भुकसा, मीनका मलीन वर्ण है। प्रयोजन यह है कि जो तात्कालिक राशिका वर्ण है वही हृत नष्टादिक द्रव्यका वर्ण जाने॥ ६॥

राशिसंज्ञादिग्विभागः ।

पुंस्त्री क्रूराक्रूरौ चरस्थिरद्विस्वभावसंज्ञाश्च ॥
अजवृषमिथुनकुलीराः पंचमनवमैः सहेंद्राद्याः ॥ ७ ॥

इसके अनन्तर राशियोंकी संज्ञा और दिशा विभाग कहते हैं:- राशियोंकी क्रमसे पुरुष, स्त्री; क्रूर, अक्रूर; चर, स्थिर; द्विस्वभाव संज्ञा है । जैसे मेष पुरुष, वृष स्त्री, मिथुन पुरुष, कर्क स्त्री, सिंह पुरुष, कन्या स्त्री, तुला पुरुष, वृश्चिक स्त्री, धनु-पुरुष, मकर स्त्री, कुम्भ पुरुष, मीन स्त्री, मेष क्रूर, वृष सौम्य, मिथुन अशुभ, कर्क शुभ, सिंह अशुभ, कन्या शुभ, इसी क्रमसे शेष राशि जाने । और मेष चर, वृष स्थिर, मिथुन द्विस्वभाव, कर्क चर, सिंह स्थिर, कन्या द्विस्वभाव, तुला चर, वृश्चिक स्थिर, धनु द्विस्वभाव, मकर चर, कुम्भ स्थिर, मीन द्विस्वभाव संज्ञक है । प्रयोजन यह है कि जैसा तात्कालिक राशिका शील हो तैसाही पुरुषका शील जाने । अज (मेष), वृष, मिथुन, कुलीर (कर्क) राशि क्रमसे अपने पांचवें राशि और नवम राशिसहित पूर्वादिक दिशावाची हैं । तात्पर्य यह है कि-मेष, सिंह, धनु राशियोंकी पूर्व दिशा; वृष कन्या, मकरकी दक्षिणदिशा; मिथुन, तुला, कुम्भकी पश्चिम दिशा; कर्क, वृश्चिक, मीनकी उत्तर दिशा है । प्रयोजन यह है कि जो तात्कालिक राशि की दिशा है वही चौरादिकोंकी दिशा जाने ॥ ७ ॥

राश्यंशाधिपाः ।

कुजशुक्रज्ञेंद्रर्कज्ञशुक्रकुजजीवसौरियमगुरवः ॥
मेशा नवांशकानामजमकरतुलाकुलीराद्याः ॥ ८ ॥

इसके अनन्तर राशियोंके स्वामियोंको कहते हैं:-कुज (मंगल), शुक्र, ज्ञ (बुध), इन्दु (चंद्रमा), अर्क (सूर्य), ज्ञ (बुध), शुक्र, कुज (मंगल), जीव (बृहस्पति), सौरि (शनि),

यम (शनि,) गुरु (बृहस्पति) ये क्रमसे मेषादिक राशियोंके स्वामी हैं। जैसे मेषका स्वामी मंगल, वृषका शुक्र, मिथुनका बुध, कर्कका चन्द्रमा, सिंहका सूर्य, कन्याका बुध, तुलाका शुक्र, वृश्चिकका मंगल, धनुका बृहस्पति, मकर कुम्भका शनि, मीनका बृहस्पति स्वामी है। अज (मेष), मकर, तुला, कुलीर (कर्क) आदिक राशि क्रमसे नवांशकोंकी हैं। अर्थात् मेष राशिके नवांशक मेषसे लेकर धनुषपर्यन्त हैं, वृषके मकरसे लेकर कन्या-पर्यन्त हैं और मिथुनके तुलासे लेकर मिथुनपर्यन्त हैं, और कर्कके नवांशक कर्कसे लेकर मीनपर्यन्त हैं, और मेषके समान ही सिंह और धनुके नवांशक हैं; और वृषके समान कन्या और मकरके नवांशक हैं; और मिथुनके समान तुला और कुम्भके नवांशक हैं; और कर्कके समान वृश्चिक और मीनके नवांशक हैं; भाव यह है कि मेष, सिंह, धनके नवांशक मेषसे गिने जाते हैं, और वृष, कन्या, मकर राशिके नवांशक मकरसे गिने जाते हैं; और तुला, मिथुन, कुम्भके नवांशक तुलासे गिने जाते हैं; और कर्क, वृश्चिक, मीनके नवांशक कर्कसे गिने जाते हैं;। नवांशकोंके राशिके स्वामी वेही हैं जो राशियोंके स्वामी हैं ॥ ८ ॥

होराद्रेष्काणद्वादशांशत्रिंशांशज्ञानम्।

स्वगृहाद्वादशभागा द्रेष्काणाः प्रथमपञ्चनवपानाम्॥
होरे विषमेऽर्केन्द्वोः समराशौ चन्द्रतीक्ष्णांशोः ॥ ९ ॥

इसके अनन्तर द्वादशांश द्रेष्काण होरा स्वामिज्ञान कहते हैं:-अपने घरसे द्वादश भाग अर्थात् २ अंश ३० कलाओंके भाग कर गिने वही द्वादशांशक कहाता है। जैसे मेषके द्वादशांश मेषसे लेकर मीनपर्यन्त होता है, वृषका वृषसे लेकर मेषपर्यन्त, मिथुनका मिथुनसे लेकर वृषपर्यन्त, और कर्कका कर्कसे लेकर मिथुनपर्यन्त, सिंहका सिंहसे लेकर कर्कपर्यन्त, इसीप्रकार शेष भी जानें

और द्वादशांशकोंके स्वामी वेही हैं जो राशियोंके स्वामी हैं; और प्रथम, पंचम, नवम राशियोंके स्वामियोंके सम्बंधी द्रेष्काण होवे हैं। भाव यह है कि, राशियोंके त्रिभागका नाम द्रेष्काण है सो क्रमसे प्रथम पंचम राशियोंके स्वामियोंके सम्बंधी होते हैं। जैसे मेषराशिका प्रथम द्रेष्काण मेषराशिके स्वामी मंगलसम्बंधी है; और मेषका दूसरा द्रेष्काण मेषसे पंचम राशि सिंहके स्वामी सूर्य-सम्बंधी है; और मेषका तीसरा द्रेष्काण मेषसे नवम राशि धनुके स्वामी बृहस्पतिसम्बंधी है, इसी प्रकार वृषादिक राशियोंके द्रेष्काण जानने। विषम राशि होतेसंते अर्क (सूर्य), इन्दु (चन्द्रमा) के क्रमसे होरा होते हैं। अर्थात् पहिला सूर्यका, दूसरा चन्द्रमाका होता है। भाव यह है कि; होरा राशिके अर्द्ध भागको कहते हैं। जो विषम राशि मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ होवें तो पहिला होरा सूर्यका, दूसरा चन्द्रमाका होता है। समराशिमें चन्द्रमा और तीक्ष्णांशु (सूर्य) का होरा होवे है। भाव यह है कि यदि समराशि वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन राशि होवे तो पहिला चन्द्रमाका, दूसरा सूर्यका होता है॥ ९ ॥

कुजयमजीवज्ञसिताः पंचें ५ द्रिय ५ वसु ८ मुनीं ७ द्रियां ५ शानाम् ॥ विषमेषु समर्क्षेषूत्क्रमेण त्रिंशांशकाः कल्प्याः ॥ १० ॥

विषम राशि अर्थात् मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ राशियोंके विषे पाच ५ इंद्रिय ५ वसु ८ मुनि ७ इंद्रिय ५ संख्यक अंशोंके क्रमसे कुज (मंगल), यम (शनैश्चर), जीव (बृहस्पति) ज्ञ, (बुध) सित (शुक्र) ग्रह त्रिंशांशक कल्पना करने योग्य हैं। और सम राशियोंके विषे तिनके उलटे क्रमसे त्रिंशांशक कल्पना करने चाहिये। भाव यह है कि विषम मेष मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ राशियोंके विषे प्रथम ५ अंशतक

मंगलका, फिर ९ अंशतक शनैश्चरका, फिर ८ अंशतक बृहस्पतिका, फिर ७ अंशतक बुधका, फिर ९ अंशतक शुक्रका त्रिंशांशक होवे है। और यदि समराशि बृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन राशियोंके विषे पूर्व कहे भये क्रमसे उलटी रीति कर अर्थात् प्रथम ९ अंशतक शुक्रका, फिर ७ अंशतक बुधका, फिर ८ अंशतक बृहस्पतिका, फिर ९ अंशतक शनैश्चरका, फिर ९ अंशतक मंगलका त्रिंशांशक होवे है ॥ १० ॥

द्विपदादिसंज्ञा ।

नृचतुष्पदकीटाप्या बलिनः प्राग्दक्षिणापरोत्तरगाः ॥
संध्याद्युरात्रिबलिनः कीटा नृपचतुष्पदाश्चैवम् ॥ ११ ॥

इसके अनन्तर राशियोंका दिग्बल तथा राशियोंकी अवान्तर संज्ञा कहते हैं-नृराशि मिथुन, कुम्भ, कन्या, तुला, धनुका पूर्वार्द्ध और चतुष्पद राशि मेष, सिंह, वृष, धनुका परार्द्ध और मकरका पूर्वार्द्ध और कीटराशि वृश्चिक और आप्यराशि अर्थात् जलचरराशि कर्क, मीन और मकरका परार्द्ध ये क्रमसे पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर दिशावाची भावोंमें स्थित हों तो बली होते हैं। भाव यह है कि-मिथुन, कुम्भ, कन्या का तुला और धनुका पूर्वार्द्ध ये पूर्व अर्थात् लग्नमें स्थित होवें तौ बली होवे हैं और मेष, वृष, सिंह और धनुका परार्द्ध और मकरका पूर्वार्द्ध ये दक्षिण अर्थात् दशम भावमें स्थित हों तो बली होवे है और वृश्चिक यह पश्चिम अर्थात् सप्तम भावमें स्थित हों तो बली होवे है और कर्क, मीन और मकरका परार्द्ध ये उत्तर अर्थात् सप्तम भावमें स्थित हों तो बली होवे हैं और कीटसंज्ञक राशि तथा नरराशि तथा चतुष्पदराशि ये क्रमसे इसी प्रकार संध्या तथा दिन तथा रात्रि में बली हैं। भाव यह है कि कीटराशि कर्क, वृश्चिक, मीन और मक-

१ यहांपर जलचर राशिभी कीट शब्दके ग्रहण करके ग्रहण किये हैं।

रका परार्द्ध ये संध्याकालमें बली हैं और नरराशि मिथुन, कुम्भ, कन्या, तुला और धनुका पूर्वार्द्ध ये दिनमें बली हैं और चतुष्पद-राशि मेष, सिंह, वृष, धनुका परार्द्ध और मकरका पूर्वार्द्ध रात्रिमें बली हैं ॥ ११ ॥

मेषवृषधन्विसिंहाश्चतुष्पदा मकरपूर्वभागश्च ॥
कीटः कर्कटराशिः सरीसृपो वृश्चिकः कथितः ॥१२॥

मेष, वृष, धनु, सिंह और मकरका पूर्वार्द्ध चतुष्पद संज्ञक है और कर्कराशि कीटसंज्ञक है और वृश्चिकराशि सरीसृप संज्ञक है ॥ १२ ॥

मकरस्य पश्चिमार्धो ज्ञेयो मीनश्च जलचरः ख्यातः ॥
मिथुनतुलाघटकन्या द्विपदाख्योधन्विपूर्वभागश्च॥१३॥

मकरका पिछला आधा और मीनराशि जलचर संज्ञक जानना और मिथुन, तुला, घट (कुम्भ), कन्या और धनुकापूर्वार्द्ध द्विपदसंज्ञक हैं ॥ १३ ॥

राशिबलज्ञानम् ।

अधिपयुतो दृष्टो वा बुधजीवयुतेक्षितश्च यो राशिः ॥
स भवति बलवान्न यदा युक्तो दृष्टोऽपि वा शेषैः ॥१४॥

इसके अनन्तर राशियोंका बलाबलज्ञान कहते हैं—जो राशि स्वामीसे युक्त वा देखा गया हो अथवा बुध, जीव (बृहस्पति) से युक्त वा देखा गया हो सो बलवान् होवै है और जो स्वामी बुध, बृहस्पतिसे शेष जो ग्रह हैं तिनसे युक्त वा देखा गया हो तौ बलवान् नहीं है । भाव यह है कि जिस राशिको स्वामी, बुध, बृहस्पति देखते हों वा युक्त हों तौ वह राशि बलवान् है और जो शेष ग्रह देखते हों वा युक्त हों तौ बलहीन होवे है ॥ १४ ॥

तन्वादिभावसंज्ञा।

तनु १ धन २ सहज ३ सुहृत् ४ सुत ५ रिपु ६ जाया ७ मृत्यु ८ धर्म ९ कर्म १० आयः ११ ॥ व्यय १२ इति लग्नाद्भावाश्चतुरस्राख्येऽष्टमचतुर्थे ॥ १५ ॥

इसके अनन्तर द्वादशभावोंकी तन्वादिक संज्ञा कहते हैं-तनु, धन, सहज, सुहृत्, सुत, रिपु जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय, व्यय ये लग्नसे लेकर द्वादश भाव हैं। भाव यह है कि लग्नको तनु, द्वितीयको धन, तृतीयको सहज, चतुर्थको सुहृत्, पंचमको सुत, छठेको रिपु, सप्तमको जाया, अष्टमको मृत्यु, नवमको धर्म, दशमको कर्म एकादशको आय; द्वादशको व्यय कहते हैं। अष्टम और चतुर्थ दोनों चतुरस्रसंज्ञक हैं ॥ १५ ॥

पातालहिबुकवेश्मसुखबंधुसंज्ञाश्चतुर्थभावस्य ॥ नवपञ्चमे त्रिकोणे नवमर्क्षे त्रित्रिकोणे च ॥ १६ ॥

चतुर्थ भावकी पाताल तथा हिबुक तथा वेश्म तथा सुख और बन्धु संज्ञा है और नवम तथा पञ्चमकी त्रिकोण संज्ञा है, और केवल नवम भावकी त्रित्रिकोण संज्ञा है ॥ १६ ॥

धीः पञ्चमं तृतीयं दुश्चिक्यं सप्तमं तु जामित्रम् ॥ द्यूनं द्यूतं तद्वच्छिद्रमष्टमं द्वादशं रिःफम् ॥ १७ ॥

लग्नसे पंचम भाव धीसंज्ञक है और तृतीय भाव दुश्चिक्य संज्ञक है, और सप्तम भाव जामित्र और द्यून तथा द्यूतसंज्ञक है; तथा अष्टम भाव छिद्र, द्वादश भाव रिःफसंज्ञक है ॥ १७ ॥

[संज्ञा] केंद्रादिसंज्ञा।

केंद्रचतुष्टयकंटकलग्नाऽस्तदशमचतुर्थानाम् १।७।१०।४। संज्ञापरतः पणफरमापोक्लीमं च तत्परतः ॥ १८ ॥

लग्न और अस्त (सप्तमभाव) और दशम भाव और चतुर्थ भावोंकी केंद्र तथा चतुष्टय तथा कंटक संज्ञा है और तिन समस्त केंद्रोंसे परभावोंकी अर्थात् द्वितीय, पंचम, अष्टम, एकादश भावोंकी पणफर संज्ञा है और तिन समस्त पणफरभावोंसे परभावोंकी अर्थात् तृतीय, षष्ठ, नवम, द्वादश भावोंकी आपोक्लीम संज्ञा है ॥ १८ ॥

उपचयवर्गोत्तमलक्षणम् ।

त्रिषडेकादशदशमान्युपचयभावा ३।६।११।१०
न्यतोऽन्यथान्यानि ॥ वर्गोत्तमा नवांशाश्चरादिषु
प्रथममध्यांत्याः ॥ १९ ॥

लग्नसे तृतीय, षष्ठ, एकादश, दशम स्थान उपचयभाव संज्ञक हैं, और इनके अन्यथा अर्थात् शेषभाव प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, पंचम, सप्तम, अष्टम, नवम, द्वादश भाव अन्य अर्थात् अपचयसंज्ञक है । वर्गोत्तम नवांशक चरादिक अर्थात् चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियोंके विषे प्रथम, मध्यम, अन्त्य संज्ञक है । भाव यह है कि चर राशियोंके विषे पहिलेही नवांशककी वर्गोत्तम संज्ञा और स्थिर राशियोंके विषे मध्यम अर्थात् पंचम नवांशककी वर्गोत्तम संज्ञा है और द्विस्वभाव राशियोंके विषे अन्त्य अर्थात् नवमनवांशककी वर्गोत्तम संज्ञा है॥१९॥

दिनरात्रिबला राशयः ।

मेषाद्याश्चत्वारः सधन्विमकराः क्षपाबला ज्ञेयाः ॥
पृष्ठोदया विमिथुनाः शिरसान्ये ह्युभयतो मीनः॥२०॥

इसके अनन्तर राशियोंका दिन रात्रि बल तथा पृष्ठोदय, शीर्षोदय संज्ञा कहते हैं:—धनु और मकरसहित मेषादि चारों राशि अर्थात् धन, मकर, मेष, वृष, मिथुन, कर्क यह रात्रिबली

जाननी। और अन्य सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मीन राशि दिन बली है। यद्यपि यहाँ बलका ग्रहण किया है परन्तु तब भी संज्ञामात्र ही जानना। जैसे मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धनु, मकर, रात्रि-संज्ञक हैं और सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मीन दिनसंज्ञक हैं क्योंकि इनका कालबल तो पहले ही कह चुके और मिथुन राशि कर वर्जित रात्रिसंज्ञक राशि अर्थात् मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर पृष्ठोदयसंज्ञक हैं और अन्य मिथुन सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक कुम्भ-राशि शिर करके उदय होवे हैं अर्थात् शीर्षोदयसंज्ञक है और मीन पृष्ठोदय तथा शीर्षोदय दोनों-संज्ञक हैं ॥ २० ॥

उच्चलक्षणम्।

अज १ वृष २ मृगां १० गना ६ कर्कि ४ मीन १२ वणिजांशकेष्विनाद्युच्चाः॥दश १० शिख्य ३ ष्टाविंशति २८तिथीं १५ द्रिय ५त्रिनव २७ विंशे २० षु ॥ २१ ॥

इसके अनन्तर सूर्यादिक ग्रहोंके उच्चराशि अंश कहते हैं:–अज (मेष), वृष, मृग (मकर), अङ्गना (कन्या), कर्कि (कर्क), मीन वणिज, (तुला) इनके दश (१०), शिखी (३) अष्टाविंशति (२८) तिथि (१५), इन्द्रिय (५) त्रिनव (२७) विंश (२०) अंशोंके क्रमसे सूर्यादिक ग्रह उच्च हैं। भाव यह है कि मेषके १० अंशतक सूर्य परमोच्चका है वृषके ३ अंशतक चन्द्रमा परमोच्चका है और मकरके २८ अंशतक मंगल परमोच्चका है और कन्याके १५ अंशतक बुध परमोच्चका है और कर्कके ५ अंशतक बृहस्पति परमोच्चका है और मीनके २७ अंशतक शुक्र परमोच्चका है और तुलाके २० अंशतक शनैश्चर परमोच्चका है ॥ २१ ॥

नीचमूलत्रिकोणम् ।

उच्चन्नीचं सप्तममर्कादीनां त्रिकोणसंज्ञेति ॥ सिंह५वृषा२ज १ प्रमदा ६ कार्मुकभृत् ९ तौलि ७ कुंभधराः॥ २२॥

सूर्यादिक ग्रहोंके उच्चराशिसे क्रमपूर्वक सप्तम राशि नीच संज्ञक है । अर्थात् तुलाके १० अंशतक सूर्य परम नीचका है और वृश्चिकके ३ अंशतक चन्द्रमा परम नीचका है और कर्कके २८ अंशतक मंगल परम नीचका है और मीनके १५ अंशतक बुध परम नीचका है और मकरके ५ अंशतक बृहस्पति परम नीचका है और कन्याके २७ अंशतक शुक्र परम नीचका है और मेषके २० अंशतक शनैश्चर परम नीचका है और सिंह, वृष, अज (मेष) प्रमदा (कन्या) कार्मुकभृत् (धनु) तौलि (तुला) कुम्भधर (कुम्भ) ये राशि क्रमसे सूर्यादिक ग्रहोंके त्रिकोणसंज्ञक हैं । अर्थात् सूर्यका सिंहराशि त्रिकोणसंज्ञक है । और चन्द्रमाका वृषराशि त्रिकोणसंज्ञक है । और मंगलका मेषराशि त्रिकोणसंज्ञक है और बुधका कन्याराशि त्रिकोणसंज्ञक है और बृहस्पतिका धनुराशि त्रिकोण संज्ञक है और शुक्रका तुलाराशि त्रिकोण संज्ञक है शनैश्चरका कुम्भराशि त्रिकोण-संज्ञक है ॥ २२ ॥

---

१ सूर्यादिक ग्रहोंका त्रिकोण तथा निजगृह तथा उच्चराशियोंके अंशोंको और ग्रन्थसे केवल भाषाहीमें लिखते हैं । सूर्यके २० अंश सिंह राशिपर त्रिकोणसंज्ञक हैं और शेष १० अंश निजगृहसंज्ञक हैं, और चन्द्रमाके ३ अंश वृषपर उच्चसंज्ञक हैं और २७ अंश त्रिकोणसंज्ञक हैं और मंगलके १२ अंश मेषराशिपर त्रिकोणसंज्ञक हैं और शेष १८ अंश निजगृहसंज्ञक हैं, और बुधके कन्याराशि १५ उच्चसंज्ञक हैं और इनसे पीछे १० अंश त्रिकोणसंज्ञक हैं और इनसे पीछे ५ अंश निजगृहसंज्ञक हैं, बृहस्पतिके १० अंश धनुराशिपर त्रिकोणसंज्ञक हैं और शेष २० अंश निजगृहसंज्ञक हैं और शुक्रके १५ अंश तुलाराशिपर त्रिकोणसंज्ञक हैं और शेष १५ अंश निजगृहसंज्ञक हैं और शनैश्चरके कुम्भराशिपर २० अंश त्रिकोणसंज्ञक हैं और शेष १० अंश निज-गृहसंज्ञक हैं ।

षड्वर्गाः।

गृह ३० होरा १५ द्रेष्काणा १० नवभागो ३।२० द्वादशांशक २।३० त्रिंशः ३० ॥ वर्गः प्रत्येतव्यो ग्रहस्य यो यस्य निर्दिष्टः ॥ २३ ॥

गृह राशिके समस्त ३० अंशोंका नाम है, होरा राशिका अर्द्ध भाग १५ अंशोंका नाम है, द्रेष्काण राशिके त्रिभाग १० अंशोंका नाम है, और नवम भाग राशिके ३ अंश २० कलाओंका नाम है, द्वादशांशक राशिका बारहवां भाग २ अंश ३० कलाओंका नाम है, और त्रिंशांशक राशिके ३० अंशोंका नाम है। इन सबोंको वर्गसंज्ञक कहते हैं। जिस ग्रहका जो वर्ग कहा हो उस ग्रहका वही वर्ग प्रतीत करना चाहिये। इस विषयमें यह और जानना चाहिये कि जो ग्रह अपनेही राशि, होरा, द्रेष्काण, नवांशक, द्वादशांशक, त्रिंशांशकमें स्थित हो वह स्ववर्गस्थ कहाता है, परन्तु सूर्य, चन्द्रमाका त्रिंशांशक नहीं होता है और भौमादिकोंका होरा नहीं होता है। इस प्रकार सब जगह जानना चाहिये ॥ २३ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचितभाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः। 2.1

आत्मचित्तज्ञानादिसंज्ञा।

आत्मा रविः शीतकरस्तु चेतः सत्त्वं धराजः शशिजोऽथ वाणी ॥ ज्ञानं सुखं चेंद्रगुरुर्मदश्च शुक्रः शनिः कालनरस्य दुःखम् ॥ १ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंका योनिप्रभेदाध्याय निरूपण किया जाता है:—कालनरका आत्मा रवि (सूर्य) है, और शीतकर (चन्द्रमा) चित्त है, और धराज (मंगल) सत्व है, शशिज (बुध) वाणी है, और इंद्रगुरु (बृहस्पति) ज्ञान तथा सुख है, और मद (कामदेव) है और शनैश्चर दुःखरूप है ॥ १ ॥

आत्मादयो गगनगैर्बलिभिर्बलवत्तराः ॥
दुर्बलैर्दुर्बला ज्ञेया विपरीतः शनिः स्मृतः ॥ २ ॥

बली ग्रहोंकर आत्मादिक भी अधिक बली जानने और निर्बल ग्रहोंकर आत्मादिक भी निर्बल जानने, परन्तु शनैश्चर उलटी रीतिसे कहा है । अर्थात् जो शनैश्चर बली हो तो अपने स्वरूपको निर्बल करता है और निर्बल हो तो अपने स्वरूपको बली करता है ॥ २ ॥

राजा रविः शशधरश्च बुधः कुमारः सेनापतिः क्षिति-
सुतः सचिवौ सितेज्यौ ॥ भृत्यस्तथा तरणिजः सबला
ग्रहाश्च कुर्वंति जन्मसमये निजमेव रूपम् ॥ ३ ॥

रवि (सूर्य) तो राजा है, और शशधर (चंद्रमा) और बुध कुमार हैं, और क्षितिसुत (मंगल) सेनापति है, और बृहस्पति शुक्र दोनों सचिव (मंत्री) हैं, और तरणिज (शनैश्चर) भृत्य (सेवक) है । पुरुषोंके जन्मसमयमें जो ग्रह सबल होवें तो अपनेही रूपको करते हैं । भाव यह है कि जिसके जन्मसमयमें जो ग्रह बली हो उसका उस ग्रहके अनुसारही रूप होता है ॥ ३ ॥

प्राच्यादीनां ईशाः ।

प्राच्यादीशा रविसितकुजराहुयमेंदुसौम्यवाक्पतयः ॥
क्षीणेंद्वर्कयमाराः पापास्तैः संयुतः सौम्यः ॥ ४ ॥

इसके अनन्तर दिशाओंके स्वामियोंको कहते हैं:--रवि (सूर्य) सित (शुक्र), कुज (मंगल), राहु, यम शनैश्चर, (इंदु) चन्द्रमा सौम्य (बुध), वाक्पति (बृहस्पति) ये क्रमसे पूर्वादिक् दिशाओंके स्वामी हैं अर्थात् पूर्व दिशाके स्वामी सूर्य, आग्नेयके शुक्र, दक्षिणके मंगल, नैर्ऋत्यके राहु, पश्चिमके शनैश्चर, वायव्यके चन्द्रमा, उत्तरके बुध, ईशानके बृहस्पति हैं। क्षीणेन्दु अर्थात् कृष्ण अष्टमीसे लेकर शुक्ल अष्टमीतकका चन्द्रमा, अर्क (सूर्य), यम (शनैश्चर) और (मंगल) ये ग्रह पापसंज्ञक हैं और तिन पापग्रहोंसे युक्त सौम्य (बुध) भी पापसंज्ञक हैं और शेष ग्रह, पूर्ण चंद्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र ये शुभ हैं ॥ ४ ॥

ग्रहाणां पुरुषस्त्रीनपुंसकसंज्ञा ।

क्लीबपती बुधसौरी चन्द्रसितौ योषितां नृणां शेषाः ॥
ऋगथर्वसामयजुरधिपा गुरुसौम्यभौमसिताः ॥ ५ ॥

बुध, सौरि (शनैश्चर) नपुंसकोंके स्वामी हैं, और चन्द्रमा, सित (शुक्र) ये दोनों स्त्रियोंके स्वामी हैं, और शेष सूर्य मंगल बृहस्पति पुरुषोंके स्वामी हैं। प्रयोजन यह है कि जो ग्रह बली होकर लग्नमें बैठा हो वा देखता हो और वह ग्रह पुरुष, स्त्री, नपुंसकोंमें जिसका स्वामी हो वही चौरादिकोंकी आकृति जाननी। ऋग्वेद, अथर्ववेद, सामवेद, यजुर्वेदके स्वामी क्रमसे गुरु (बृहस्पति) सौम्य (बुध) भौम (मंगल), सित (शुक्र) हैं। अर्थात् ऋग्वेदका स्वामी बृहस्पति, अथर्ववेदका स्वामी बुध, सामवेदका स्वामी मंगल यजुर्वेदका स्वामी शुक्र है। प्रयोजन यह है कि जो ग्रह बली होवे उसी ग्रहकी विद्यामें श्रेष्ठ ब्राह्मण होवे है, अथवा ग्रहोंकी पीडामें तिसी ग्रहकी शाखाका पाठ पूजन करे, जो ग्रहकी अरिष्ट हो ॥ ५ ॥

ब्राह्मणादिवर्णाः ।

जीवसितौ विप्राणां क्षत्रस्यारोष्णगू विशां चन्द्रः ॥
शूद्राधिपः शशिसुतः शनैश्चरः सङ्करभवानाम् ॥ ६ ॥

जीव (बृहस्पति), (सित) शुक्र ब्राह्मणोंके स्वामी हैं और आर (मंगल), उष्णगु (सूर्य) क्षत्रियोंके स्वामी हैं, चंद्रमा वणियोंका स्वामी है और शशिसुत (बुध) शूद्रोंका स्वामी है और शनैश्चर संकरभव (म्लेच्छ) जातियोंका स्वामी है। प्रयोजन यह है कि बली ग्रहसे चौरादिकोंकी जात निश्चय करे ॥ ६ ॥

बलाबलप्रकरणम् ।

बलवान् मित्रस्वगृहोच्चनवांशके वीक्षितः शुभैश्चापि ॥
चन्द्रसितौ स्त्रीक्षेत्रे पुरुषक्षेत्रोपगाः शेषाः ॥ ७ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंका बलाबल कहते हैं:—जो ग्रह मित्रक्षेत्री हो अथवा अपने घरमें स्थित हो अथवा अपने उच्चमें हो अथवा अपने नवांशकमें हो अथवा शुभग्रहोंने देखा हो वा युक्त हो वह ग्रह बली होता है। चन्द्रमा, सित (शुक्र) स्त्रीक्षेत्र अर्थात् वृषादिक सम राशियोंपर स्थित हों तो बली होते हैं, और शेष ग्रह सूर्य, मंगल, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर ये पुरुषक्षेत्र अर्थात् मेषादिक विषम राशियोंपर स्थित हों तो बली होते हैं ॥ ७ ॥

दिग्बलं चेष्टाबलम् ।

प्राच्याद्या जीवबुधौ सूर्यारौ भास्करिः शशांकसितौ ॥
उदगयने शशिसूर्यौ वक्रेऽन्ये स्निग्धविपुलाश्च ॥ ८ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंका दिग्बल तथा चेष्टाबल कहते हैं:—जीव (बृहस्पति), बुध ये दोनों प्राचीदिशा अर्थात् लग्नमें स्थित

---

१ उच्चकी साहचर्यसे त्रिकोण राशि तथा द्रेष्काणादिकोंका भी ग्रहण किया जाता है।

हों तो बली होवे हैं, सूर्य और आर (मंगल) ये दोनों दक्षिणदिशा अर्थात् दशम भावमें स्थित हों तो बली होते हैं, और भास्करि (शनैश्चर) पश्चिम दिशा अर्थात् सप्तम भावमें स्थित हो तो बली होता है, और शशांक (चन्द्रमा), सित (शुक्र) ये दोनों उत्तर दिशा अर्थात् चतुर्थ भावमें स्थित हों तो बली होते हैं। अब चेष्टाबल कहते हैं:-शशी (चन्द्रमा), सूर्य ये दोनों उत्तरायण मकरसे लेकर कर्क राशियोंपर स्थित हों तो बली होते हैं अर्थात् चन्द्रमा, सूर्य, मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृष, मिथुन, कर्क राशियोंपर स्थित हों तो बली होते हैं, और अन्य मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर वक्रगतिमें बली होवे हैं अर्थात् ये ग्रह वक्री होनेपर बली होते हैं और आकाशमें स्निग्ध विपुल अर्थात् प्रकट दीखते भये ग्रह भी बली होते हैं ॥ ८ ॥

कालबलम्।

अहनि सितार्कसुरेज्या द्युनिशं ज्ञो नक्तमिंदुकुजसौराः॥
स्वदिनादिष्वशुभशुभा बहुलोत्तरपक्षयोर्बलिनः ॥ ९ ॥

इसके अनन्तर कालबल कहते हैं:-सित (शुक्र), अर्क (सूर्य), सुरेज्य (बृहस्पति) ये ग्रह दिनमें बली होते हैं और ज्ञ (बुध) द्युनिशं अर्थात् रात्रिदिन दोनों कालमें बली होता है। इंदु (चन्द्रमा), कुज (मंगल), सौरि शनैश्चर रात्रिमें बली होते हैं तथा अपने दिनादिक कालमें अर्थात् अपने दिनमें तथा मासमें तथा प्रहरमें तथा अपने होरामें समस्त ग्रह बली होते हैं, और अशुभ ग्रह और शुभ ग्रह क्रमसे कृष्णपक्ष तथा शुक्लपक्षमें बली होते हैं, अर्थात् अशुभ ग्रह कृष्णपक्षमें बली होते हैं और शुभ ग्रह शुक्लपक्षमें बली होते हैं ॥ ९ ॥

नैसर्गिकबलम् ।

मन्दारसौम्यवाक्पतिसितचन्द्रार्का यथोत्तरं बलिनः ॥
नैसर्गिकबलमेतद्बलसाम्ये स्यादधिकचिंता ॥ १० ॥

इसके अनन्तर नैसर्गिक बल कहते हैं:-मन्द (शनैश्चर), और (मंगल), सौम्य (बुध), वाक्पति (बृहस्पति), सित (शुक्र), चन्द्रमा, अर्क (सूर्य) ये यथोत्तर क्रमसे बली हैं । अर्थात् जैसे शनैश्चरसे मंगल अधिक बली है, मंगलसे बुध, बुधसे बृहस्पति, बृहस्पतिसे शुक्र, शुक्रसे चन्द्रमा, चन्द्रमासे सूर्य अधिक बली हैं । यह ग्रहोंका नैसर्गिक बल है । जो ग्रहोंके बलकी आपसमें तुल्यता हो तो इस नैसर्गिक बलसे अधिक बली ग्रहका विचार करना चाहिये । भाव यह है कि जो आपसमें ग्रह समान बली हों तो चौरादिकका वर्ण जाति आदिक उस ग्रहसे कहे, जो नैसर्गिक बलसे अधिक बली है ॥ १० ॥

स्थानबलम् ।

मित्रक्षेत्रे स्वोच्चे स्वहोरायां स्वभवनत्रिकोणे च ॥
स्वद्रेष्काणे स्वांशे स्वदिने च बलान्विताः सर्वे ॥११॥

इसके अनन्तर स्थानबल कहते हैं:-मित्रके गृहमें तथा अपने उच्चमें तथा अपने होरामें तथा अपने घरमें तथा अपने त्रिकोणमें तथा अपने द्रेष्काणमें तथा अपने नवांशकमें तथा अपने दिनमें समस्त ग्रह बली होते हैं ॥ ११ ॥

दृष्टिविचारः ।

पूर्णं पश्यति रविजस्तृतीयदशमे त्रिकोणमपि जीवः ॥
चतुरस्रं भूमिसुतः सितार्कबुधहिमकराः कलत्रे च १२

इसके अनन्तर ग्रहोंकी दृष्टि कहते हैं:-रविज (शनैश्चर) तृतीय और दशम भावको पूर्ण देखता है; और जीव (बृहस्पति)

त्रिकोण, नवम, पंचम भावको पूर्ण देखता है;और भूमिसुत (मंगल) चतुरस्र अर्थात् चतुर्थ और अष्टम भावको पूर्ण देखता है और सित (शुक्र), अर्क (सूर्य) बुध, हिमकर (चन्द्रमा) ये कलत्र अर्थात् सप्तम भावको पूर्ण देखते हैं ॥ १२ ॥

दशमतृतीये नवपंचमे चतुर्थाष्टमे कलत्रं च ॥
पश्यंति पादवृद्ध्या फलानि चैवं प्रयच्छंति ॥१३॥

दशम तृतीय भावको तथा नवम पंचम भावको और चतुर्थ अष्टम भावको और सप्तम भावको समस्त ग्रह पाद वृद्धि कर देखते हैं । भाव यह है कि समस्त ग्रह दशम तृतीय भावको एक चरणसे देखते हैं, नवम पंचम भावको दो चरणसे देखते हैं, और चतुर्थ अष्टम भावको तीन चरणसे देखते हैं, और सप्तम भावको पूर्वदृष्टिसे देखते हैं और इसी प्रकार दृष्टिके अनुसार ही फल देते हैं । भाव यह है कि जिसको एक चरणसे देखते हों तिसका एक चौथाई फल देते हैं और जिसको दो चरणसे देखते हों उसका आधा फल देते हैं और जिसको तीन चरणसे देखते हों उसका तीन भाग फल देते हैं और जिसको समस्त दृष्टि कर देखते हों उसका समस्त फल देते हैं[1] ॥ १३ ॥

---

१ यहांपर दृष्टिज्ञान. विशेष लिखते हैं:-शनैश्चर तृतीय दशम भावको समस्त दृष्टिसे देखता है और नवम पंचम भावको एक चरणसे और चतुर्थ अष्टम भावको दो चरणसे और सप्तम भावको तीन चरणसे देखता है. बृहस्पति नवम पंचम भावको समस्त दृष्टिकर देखता है और चतुर्थ अष्टम भावको एक चरणसे और सप्तम भावको दो चरणसे और तृतीय दशम भावको तीन चरणसे देखता है । और मंगल चतुर्थ और अष्टम भावको समस्त दृष्टि कर देखता है और सप्तम भावको एक चरणसे और तृतीय दशमको दो चरणसे और नवम पंचमको तीन चरणसे देखता है । और सूर्य,चन्द्रमा,शुक्र,बुध ये सप्तम भावको समस्त दृष्टिसे देखते हैं, और तृतीय,दशमको एक चरणसे और नवम पंचमको दो चरणसे और चतुर्थ अष्टमको तीन चरणसे देखते हैं।

मित्रप्रकरणं निसर्गतत्कालमित्राणि ।

मित्राण्यर्कार्ज्जीवो ज्ञगुरू ज्ञसितौ विभास्करा विकुजाः॥
वींद्वर्का विकुजरवींदवश्च केषांचिदरयोऽन्ये ॥ १॥

इसके अनन्तर मित्रादिक प्रकरण प्रारम्भ करते हैं:-अर्क (सूर्य) से लेकर ग्रह मित्रसंज्ञक हैं, तिसमें सूर्यके मित्र जीव (बृहस्पति) हैं और शेष शत्रु हैं। और चन्द्रमाके ज्ञ (बुध), गुरु (बृहस्पति) मित्र हैं और शेष शत्रु हैं। और मंगलके ज्ञ (बुध), सित (शुक्र) मित्र हैं और शेष शत्रु हैं। और बुधके विभास्कर अर्थात् सूर्यको त्यागकर और ग्रह मित्र हैं और सूर्य शत्रु है। और बृहस्पतिके विकुज अर्थात् मंगलको त्याग और ग्रह मित्र हैं और मंगल शत्रु है। और शुक्रके इन्दु (चन्द्रमा), अर्क (सूर्य) इनको त्याग और ग्रह मित्र हैं और सूर्य, चन्द्रमा शत्रु हैं। और शनैश्चरके कुज (मंगल), रवि (सूर्य), इन्दु (चन्द्रमा) इनको त्याग और ग्रह मित्र हैं और मंगल, सूर्य, चन्द्रमा ये शत्रु हैं। यह भी किसी एक आचार्योंका मत है ॥ १ ॥

पंचधा मैत्रीलक्षणम् ।

शत्रू मंदसितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषा रवेस्ती-
क्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्च सुहृदः शेषाः समाः शीतगोः ॥
जीवेंदूष्णकराः कुजस्य सुहृदो ज्ञोऽरिः सितार्की समौ
मित्रे सूर्यसितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चापरे ॥२॥

रवि (सूर्य) के मन्द (शनैश्चर), सित (शुक्र) ये दोनों शत्रु हैं, और शशिज (बुध) सम है और शेष चन्द्रमा, मंगल बृहस्पति मित्र हैं। और शीतगु (चन्द्रमा) के तीक्ष्णांशु (सूर्य) और हिमरश्मिज (बुध) ये दोनों मित्र हैं, और शेष मंगल, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर सम हैं। और कुज (मंगल) के

जीव (बृहस्पति), इन्दु (चन्द्रमा), उष्णकर (सूर्य) ये मित्र हैं, ज्ञ (बुध) शत्रु है, सित (शुक्र), आर्कि (शनैश्चर) ये दोनों सम हैं। और बुधके सूर्य और सित(शुक्र), मित्र हैं, और हिमगु (चन्द्रमा) शत्रु है, और शेष मंगल, बृहस्पति, शुक्र सम हैं ॥ २ ॥

सूरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्योऽपरो त्वन्यथा सौम्यार्की सुहृदौ समौ कुजगुरू शुक्रस्य शेषावरी ॥ शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरस्य चान्येऽरयस्तत्काले च दशा १०ऽऽय ११ बन्धु ४ सहज ३ स्वां २ त्येषु १२ मित्रं स्थिताः ॥३॥

सूरि (बृहस्पति) के सौम्य (बुध), सित (शुक्र) शत्रु हैं और रविसुत (शनैश्चर) मध्यम है और अपर शेष चन्द्रमा, मंगल, सूर्य मित्र हैं। और शुक्रके सौम्य (बुध), आर्कि (शनैश्चर) ये दोनों मित्र हैं और कुज (मंगल), गुरु (बृहस्पति) ये दोनों सम हैं और शेष चन्द्रमा सूर्य ये दोनों शत्रु हैं। और शनैश्चरके शुक्र और ज्ञ (बुध) ये दोनों मित्र हैं और सुरगुरु (बृहस्पति) सम है और अन्य सूर्य, चन्द्रमा मंगल शत्रु हैं। और तत्काल लग्नमें सूर्यादिक ग्रहोंके स्थानमें दश१० आय ११ बन्धु ४ सहज ३ स्व २ अन्त्य१२ इन भावोंमें स्थित भये ग्रह मित्र होते हैं ॥ ३ ॥

मित्रमुदासीनोऽरिर्व्याख्याता ये निसर्गभावेन ॥
तेऽधिसुहृन्मित्रसमास्तत्कालमुपस्थिताश्चित्याः॥४॥

जो अपने स्वभावसे मित्र, उदासीन और शत्रु कहे ये तत्कालिक लग्नमें परस्परके सुहृद्, मित्र सम होते हैं ॥ ४ ॥

मूलत्रिकोणषष्ठं त्रिकोणनिधनैकराशिसप्तमगाः ॥
एकैकस्य यथा सम्भवन्ति तात्कालिका रिपवः ॥५॥

सूर्यादिक ग्रहोंके मूलत्रिकोणराशि अर्थात् सिंह, वृष, मेष, कन्या, धनु, तुला, कुम्भ और छठा स्थान और त्रिकोण (नवम पंचमभाव) तथा निधन (अष्टमभाव) एक राशि तथा सप्तम भावमें स्थित भये ग्रह तात्कालिक शत्रु होते हैं ॥ ९ ॥

२७

सूर्यस्वरूपम् ।

चतुरस्रो नात्युच्चस्तनुकेशः पैत्तिकोऽस्थिसारश्च ॥
शूरो मधुपिंगाक्षो रक्तः श्यामः पृथुश्चार्कः ॥ १ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंका स्वरूप कहते हैं:-चतुरस्र अर्थात् चारों तरफसे समान शरीरवाला और कुछ ऊंचे शरीरवाला परन्तु अति ऊंचा नहीं और थोडे बालोंसे युक्त, पित्तप्रकृति और अस्थिसार अर्थात् दृढ और अधिक हाडोंवाला, शूरवीर, मधुपिंगाक्ष अर्थात् कुछ मधुर ललाईसे युक्त नेत्रोंवाला और लाल तथा कृष्णवर्णसे युक्त, पृथु मोटे शरीरवाला ऐसा अर्क (सूर्य) है ॥ १ ॥

चन्द्रस्वरूपम् ।

स्वच्छः प्राज्ञो गौरश्चपलः कफवातिको रुधिरसारश्च ।
मृदुवाग्घृणी प्रियसखस्तनुवृत्तश्चंद्रमाः प्रांशुः ॥ २ ॥

निर्मल, देखने योग्य, बुद्धिमान्, श्वेतवर्णसे युक्त, चपल तथा कफ वात स्वभाववाला और बहुत रुधिरसे युक्त और कोमलवाणी, दयायुक्त, मित्रोंपर प्रीति करनेवाला, लटे भये तथा गोलाकार शरीरसे युक्त, ऊँचा ऐसा चन्द्रमा है ॥ २ ॥

भौमस्वरूपम् ।

हिंस्रो ह्रस्वस्तरुणः पिंगाक्षः पैत्तिको दुराधर्षः ॥
चपलः सरक्तगौरो मज्जासारश्च माहेयः ॥ ३ ॥

हिंसायुक्त, थोडे ऊंचे शरीरवाला, तरुण, लालनेत्र, पित्तस्वभाव, दुराचारी, चपलताईयुक्त, लाल तथा गौरवर्ण, बहुतसे मज्जावाला ऐसा माहेय (मंगल) है ॥ ३ ॥

बुधस्वरूपम् ।

मध्यमरूपः प्रियवाग्दूर्वाश्यामः शिरातनो निपुणः॥
त्वक्सारस्त्रिस्थूणः सततं हृष्टस्तु चंद्रसुतः ॥ ४ ॥

मध्यमरूप, प्रियवाणी, दूर्वादलके समान श्याम शरीर, नाडियोंसे परिपूरित, चतुराईयुक्त, मोटी त्वचावाला, वात पित्त कफस्वभाव, हर्षयुक्त ऐसा चन्द्रमाका पुत्र बुध है ॥ ४ ॥

बृहस्पतिस्वरूपम् ।

मधुनिभनयनो मतिमानुपचितमांसः कफात्मको
गौरः ॥ ईषत्पिंगलकेशो मेदःसारो गुरुर्दीर्घः॥ ५ ॥

कुछ मधुर, भयभीत नेत्रोंसे युक्त, बुद्धिमान्, पुष्टमांसवाला, कफ-प्रकृति, गौरवर्ण, कुछ लाल बालोंवाला, बहुत मेदासे युक्त, ठिगने शरीरवाला ऐसा गुरु (बृहस्पति) है ॥ ५ ॥

शुक्रस्वरूपम् ।

श्यामो विकृष्टपर्वा कुटिलासितमूर्धजः सुखी कांतः॥
कफवातिको मधुरवाग्भृगुपुत्रः शुक्रसारश्च ॥ ६ ॥

कुछ श्याम शरीर, विकृष्टपर्वा (विरलशरीरसन्धिवाला), टेढे तथा काले बालोंसे युक्त, सुख भोगनेवाला, सुन्दर देखने योग्य, कफवात-प्रकृति, मधुरवाणी, अधिक वीर्यवाला ऐसा शुक्र है ॥ ६ ॥

शनिस्वरूपम् ।

कृशदीर्घः पिंगाक्षः कृष्णः पिशुनोऽलसोऽनिलप्र-
कृतिः ॥ स्थूलनखदंतरोमा शनैश्चरः स्नायुसारश्च॥७॥

लटे तथा ऊंचे शरीरवाला, कपिलनेत्र, काला, पराई निंदा करनेवाला, आलसी, वातप्रकृति, मोटे २ नख तथा दांत तथा रोंगटोंसे युक्त, स्नायुसार ऐसा शनैश्चर है ॥ ७ ॥

एते ग्रहा बलिष्ठाः प्रसूतिकाले नृणां स्वमूर्तिसमम् ॥
कुर्युर्देहं नियतं बहवश्च समागता मिश्रम् ॥ ८ ॥

जन्मसमयमें ये ग्रह बली हो कर निश्चय ही अपनी मूर्तिके समान मनुष्योंका देह करते हैं । और यदि बहुतसे इकट्ठे होकर बली होवें तो मिला भया शरीरादिक कहे । भाव यह है कि जन्मसमय जो ग्रह बली हो उसके ही समान पुरुषका शरीर कहे और जो बहुत ग्रह बली होकर इकट्ठे हों तो उन सब ग्रहोंके समान मिले भये शरीरादिक अवयव कहे ॥ ८ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचित-
भाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अथ तृतीयोऽध्यायः ।

आधाने मैथुनलक्षणम् ।

आधानेऽस्त ७ ग्रहं यत्तच्छीलो मैथुने पुमान् भवति ॥
सायासमसद्युतवीक्षिते विदग्धं शुभैरस्ते ॥ १ ॥

इसके अनन्तर आधानप्रकरण कहते हैं:-तिसमें प्रथम मैथुनकृत ज्ञान कहा जाता है । गर्भाधान वा प्रश्नकालके समय जैसा अस्त (सप्तम) ग्रह हो तिसी स्वभाववाला पुरुष मैथुनमें होवे है । भाव यह है कि गर्भाधानके समय लग्नराशिसे जो सप्तम राशि है तिस नामवाला जन्तु जिस तरह मैथुन करता है उसी तरहसे युक्त होकर मैथुन करनेवाला पुरुष कहना । और वही अस्त (सप्तमस्थान) असत् पापग्रहोंसे युक्त वा देखा गया हो तो उसी

मैथुनको श्रम कलहयुक्त कहना, और शुभ ग्रहोंसे युक्त वा देखा गया हो तो उसी मैथुनको विदग्ध अर्थात् श्रमवर्जित हास्य विलासादिक युक्त कहना ॥ १ ॥

दीपज्ञानं प्रसूतिकालज्ञानम् ।

सौरांशेऽब्जांशे वा चन्द्रः सौरान्वितोऽथ हिबुके वा ॥
शान्तो दीपो जन्मन्याधाने प्रश्नकाले वा ॥ २ ॥

इसके अनन्तर दीपकके होने न होनेका ज्ञान कहते हैं:— जन्मकाल वा गर्भाधान वा प्रश्नकालमें सौर (शनैश्चर) के नवांशकमें अर्थात् मकर कुम्भ राशिके नवांशकमें चन्द्रमा होवे अथवा अब्ज राशि कर्क मीनके नवांशकमें चन्द्रमा होवे अथवा शनैश्चरसे युक्त चन्द्रमा होवे अथवा हिबुक (चतुर्थ) स्थानमें चन्द्रमा होवे तो दीपक प्रशान्त कहना । भाव यह है कि यदि चन्द्रमा मकर वा कुम्भ वा कर्क वा मीनके नवांशकमें अथवा शनैश्चरके साथमें हो वा चतुर्थभावमें हो तो अन्धकारमें ही गर्भाधान तथा प्रसव कहना । और यदि यह समस्त योग होवे और चन्द्रमा सूर्यके साथमें हो तो अन्धकार नहीं कहना ॥ २ ॥

उदयति मृदुभांशे सप्तमस्थे च मन्दे यदि भवति

---

१ गर्भके ग्रहणयोग्य स्त्रियोंके ऋतुको अन्य ग्रन्थसे लिखते हैं:—ऋतु होनेके समय यदि स्त्रियोंके जन्मराशिसे चन्द्रमा पहिला, दूसरा, चौथा, पांचवां, सातवां, आठवां, नवां, बारहवां होवे और मंगलने देखा हो तो उस ऋतुको गर्भके ग्रहण योग्य कहे । और ऋतुस्नान होनेपर यदि स्त्रीके जन्मराशिसे चन्द्रमा तीसरा, छठा, दशवां ग्यारहवां होवे और बृहस्पति देखते हों तो भर्त्ताके साथ स्त्रियोंका संयोग कहे । परन्तु जो सूर्य देखते हों तो राजपुरुषके साथ और भौम देखते हों तो गानेवालेके साथ और बुध देखते हों तो चपल बुद्धिवाले पुरुषके साथ और यदि शुक्र देखते हों तो रूपवान्के साथ और शनैश्चर देखते हों तो दास नौकरके साथ संयोग कहना ।

निषेकः सूतिरब्दत्रयेण ॥ शशिनि तु विधिरेष द्वादशाब्दे प्रकुर्यान्निगदितमिह चिन्त्यं सूतिकालेऽपि योगः ३

मृदु शनैश्चरके राशि अर्थात् मकर कुम्भके नवांशकमें लग्न और लग्नसे सप्तम भावमें शनैश्चर होनेपर जो गर्भाधान हो तो तीन वर्ष करके प्रसूति हो, अर्थात् गर्भाधानसे तीन वर्ष पीछे सन्तानजन्म कहे । और यही विधि शशी (चन्द्रमा) में हो तो बारह वर्षमें प्रसूति करे । भाव यह है कि कर्कराशिके नवांशकमें लग्न हो और लग्नसे सप्तम भावमें चन्द्रमा हो तो गर्भाधानसे बारह वर्ष पीछे सन्तानजन्म होवे । यहां गर्भाधानके विषे गर्भका शुभ अशुभ हीनाधिक अंग कहा है सोई युक्ति करके जन्मसमयमें भी विचारे । भाव यह है कि जिस प्रकार गर्भाधानके लग्नसे गर्भका स्वरूप वर्णन करा है तिसी प्रकार जन्मलग्नसे युक्तिपूर्वक गर्भका स्वरूप जाने ॥ ३ ॥

आधानात् शुभाशुभज्ञानम् ।

यमवक्रौ द्यूनेऽर्कात्पुंसो रोगप्रदौ स्त्रियश्चन्द्रात् ।
तन्मध्यगयोर्मृत्युस्तदेकयुतदृष्टयोश्चैवम् ॥ ४ ॥

इसके अनन्तर गर्भाधान और जन्मके बीचमें शुभ अशुभ ज्ञान कहते हैं:—गर्भाधानके समय वा प्रश्नकालमें अर्क (सूर्य) से द्यून (सप्तमभाव) में यम (शनैश्चर) वक्र (मंगल) स्थित हों तो सन्तानजन्मसे पहले ही पुरुषको रोग दें, और चन्द्रमासे शनैश्चर, मंगल सप्तम भावमें बैठे हों तो स्त्रीको रोग दें और यदि सूर्य, चन्द्रमा तिन शनैश्चर मंगलके बीचमें बैठे हों तो यथाक्रम मृत्यु होवे । भाव यह है कि शनैश्चर, मंगलके बीचमें यदि सूर्य हो तो पुरुषकी मृत्यु हो, और चन्द्रमा होवे तो स्त्रीकी मृत्यु हो और यदि चन्द्रमा, सूर्य एक करके युक्त और एक करके देखे गये हों तो भी इसी प्रकार कहे । भाव यह है कि यदि सूर्य, शनैश्चर

मंगल इन दोनोंमेंसे एकके साथ युक्त हो और एकने देखा हो तो पुरुषकी मृत्यु हो, और चन्द्रमा, शनैश्चर, मंगल इन दोनोंमेंसे एकके साथ युक्त हो और एकने देखा हो तौ स्त्रीका मृत्यु हो ॥ ४ ॥

आधानात् मासाधिपतयः तत्प्रयोजनं च ।

कलल १ घना २ वयवा ३ स्थि ४ त्वक् ५ रोम ६ स्मृति७समुद्भवाः क्रमशः ॥ मासेषु शुक्रकुजजीवसूर्यचन्द्रार्किसौम्यानाम् ॥ ५ ॥

इसके अनन्तर गर्भाधानसे लेकर सात महीनोंके स्वामियोंको कहते हैं:-शुक्र, कुज (मंगल), जीव (बृहस्पति), सूर्य, चन्द्रमा, आर्कि- (शनैश्चर), सौम्य (बुध) इन ग्रहोंके महीनोंमें क्रमसे कलल अर्थात् वीर्य और रुधिरका मिलकर एकरूप घन अर्थात् वीर्य और रुधिरकी काठिन्यता, अवयव (अंग), अस्थि (हाड), त्वचा (चर्म), रोम (रोंगटे), स्मृतिसमुद्भव अर्थात् चैतन्यता ये सब होते हैं:-भाव यह कि गर्भका पहिला महीना शुक्रका है उसमें वीर्य रुधिर मिलकर एक रूप होते हैं। फिर दूसरा महीना मंगलका है उसमें मिला भया वीर्य रुधिर कर्रा होता है। फिर तीसरा महीना बृहस्पतिका है, उसमें गर्भके हाथ पांव आदिक अंग उगते हैं। फिर चौथा महीना सूर्यका है उसमें गर्भके हाड उत्पन्न होते हैं। फिर पांचवां महीना चन्द्रमाका है, उसमें गर्भके चर्म उत्पन्न होते हैं। फिर छठा महीना शनैश्चरका है, उसमें गर्भके रोम उत्पन्न होते हैं। और सातवां महीना बुधका है उसमें गर्भकी चैतन्यता उत्पन्न होती है ॥ ५ ॥

अशनोद्वेगप्रसवाः परतो लग्नेशचन्द्रसूर्याणाम् ॥ कलुषैः पीडा पतनं निंपीडितैर्निर्मलैः पुष्टिः ॥६॥

इसके अनंतर शेष रहे तीन महीनोंमें गर्भका लक्षण तथा शेष मासोंके स्वामी और महीनोंके स्वामियोंका प्रयोजन कहते हैं:-इन

कहे भये सात महीनोंसे पीछे गर्भ लग्नके स्वामी तथा चंद्रमा तथा सूर्यके महीनोंमें क्रमसे गर्भका मोचन तथा उद्वेग तथा प्रसव कहना चाहिये । भाव यह है कि गर्भका आठवां महीना गर्भाधानके लग्नके स्वामीका है, उसमें माताका किया भया भोजन गर्भ खाता है । और नवां महीना चन्द्रमाका है उसमें गर्भको उद्वेग चिंता होवे है । और दशवां महीना सूर्यका है, उसमें गर्भकी उत्पत्ति होवे है । गर्भाधानके समय मलिन ग्रहोंसे गर्भको पीडा कहे और विशेषकर हारे भये ग्रहोंसे गर्भका पतन कहे और निर्मल ग्रहोंकर गर्भकी पुष्टि कहे । भाव यह है कि गर्भाधानके समय जो ग्रह मलिन विवर्ण हो तिस ग्रहसम्बंधी महीनेमें गर्भको पीडा कहे और जो ग्रह और ग्रहने युद्धमें जीत लिया हो अथवा राहुकेतुकी शिखासे निष्प्रभ हो अथवा उलकाकर ताडित हो तो तिस ग्रह संबंधी मासमें गर्भका पतन कहना और जो ग्रह निर्मल किरणोंसे युक्त तथा बलवान् हो तो तिस ग्रहसंबंधी महीनेमें गर्भकी पुष्टि कहे ॥ ६ ॥

गर्भसंभवासंभवज्ञानम् ।

बलयुक्तौ स्वगृहांशेष्वर्कसितावुपचयर्क्षगौ पुंसाम् ॥
स्त्रीणां वा कुजचन्द्रौ यदा तदा गर्भसंभवो भवति॥७॥

इसके अनंतर गर्भका होने न होनेका ज्ञान कहते हैं:-गर्भाधानके समय अर्क(सूर्य), सित(शुक्र) ये जिस किसी राशिपर अपने घरके नवांशकमें स्थित होकर बलयुक्त हों और पुरुषके जन्मराशिसे उपचयर्क्ष अर्थात् तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें राशिपर स्थित हो अथवा कुज (मंगल) और चंद्रमा ये जिस किसी राशिपर अपने घरके नवांशकमें स्थित होकर बलयुक्त हों, और स्त्रियोंके जन्मराशिसे उपचयर्क्ष अर्थात् तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें भावमें स्थित हों तो गर्भसंभव हो

गर्भसंभवयोगं निष्फलत्वं च।

लग्ने बलिनि गुरौ वा नवपञ्चमसंस्थितेऽपि वा भवति।
योगा हतबीजानामफला वीणेव बधिराणाम् ॥ ८ ॥

अथवा लग्नमें वा नवम पञ्चम भावमें गुरु (बृहस्पति) बलवान् होकर स्थित हो तब भी गर्भसंभव कहना चाहिये। यह कहे भये गर्भसम्भवयोग नष्टवीर्य, वन्ध्या, नपुंसक, स्त्रीपुरुषोंके विषे निष्फल होवे हैं, जैसे वाजी भई वीणा बहिरे पुरुषोंके निष्फल होवे है। भाव यह है कि वाजी भई वीणा बहिरे पुरुषोंके कानोंको सुख नहीं देवे है, तैसेही यह योग निर्वीर्य, नपुंसक वा वन्ध्याओंके गर्भसम्भवका कारण नहीं है ॥ ८ ॥

गर्भे पुरुषस्त्रीज्ञानम्।

विषमर्क्षे विषमांशे संस्थिता गुरुशशांकलग्नार्काः ॥
पुंजन्मकराः समभेषु योषितां समनवांशगताः ॥९॥

इसके अनन्तर गर्भज्ञान कहते हैं:-यदि गर्भाधानके समय गुरु (बृहस्पति), शशांक (चंद्रमा), लग्न, अर्क (सूर्य) ये विषमराशि मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भराशिपर और विषम राशिकेही नवांशकमें स्थित हों तो पुरुषका जन्म करें, और समराशि वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीनराशियोंपर और समराशियोंकेही नवांशकमें स्थित हों तो स्त्रियोंका जन्म करें और यदि पुरुष स्त्री होनेके दोनों योग पाये जावें तो उसमें जो विशेष हो उसको कहे; और यदि दोनों योग बराबर हों तो अधिक बलवाले ग्रह जिस तरफ हों उसको कहै ॥ ९ ॥

---

१ यदि गर्भाधानके समय सूर्य, चन्द्रमा, शुक्र, मंगल सबही अपने नवांशकमें स्थित हों और स्त्रीपुरुषके जन्मराशिसे तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें राशिपर होवे तौ भी गर्भका सम्भव कहना।

गर्भज्ञानं यमलसंभवज्ञानं च ।

बलिनौ विषमेऽर्कगुरू नरं स्त्रियं समगृहे कुजेंदुसिताः ॥
यमलं द्विशरीरांशेष्विदुजदृष्ट्या स्वपक्षसमौ ॥ १० ॥

इसके अनन्तर पुनर्गर्भज्ञान तथा यमलसंभवज्ञान कहते हैं:-गर्भाधानके समय विषमराशि मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भराशिपर बलवान् होकर अर्क (सूर्य), गुरु (बृहस्पति) स्थित हों तो नर (पुरुष) को उत्पन्न करें; और समराशि वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक (मकर) मीन राशिपर बलवान् होकर कुज (मङ्गल) इंदु (चंद्रमा) सित (शुक्र) ये स्थित हों तो स्त्रीको उत्पन्न करें, और ये सूर्य, बृहस्पति, मंगल, चंद्रमा, शुक्र द्विशरीर अर्थात् द्विस्वभावराशिके नवांशकोंमें स्थित हों और इंदुज (बुध) न देखे हों तो अपने पक्षके समान ही यमल (द्वो) सन्तानोंको करते हैं । भाव यह है कि मिथुन और धनुके नवांशक पुरुषसंज्ञक हैं, क्योंकि विषमराशिसम्बंधी हैं । और कन्या और मीनके नवांशक स्त्रीसंज्ञक है, क्योंकि समराशिसम्बन्धी हैं मिथुन और धनुके नवांशकमें सूर्य, बृहस्पति होवें और बुध देखता हो तो दो सन्तान पुरुषोंका जन्म कहना और यदि कन्या मीनके नवांशकमें मंगल, चन्द्रमा, शुक्र होवें और बुध देखता हो तो दो सन्तान कन्याओंका जन्म कहना, और यदि पांचों ग्रह द्विस्वभाव राशिपर स्थित हों और बुध देखता हो तो एक पुरुष और एक स्त्रीका जन्म कहे ॥ १० ॥

पुंजन्मयोगांतरं निश्चयश्च ।

लग्नाद्विषमोपगतः शनैश्चरः पुत्रजन्मदो भवति ॥
निगदितयोगबलाबलमवलोक्य विनिश्चयो वाच्यः ११॥

शनैश्चर लग्नको त्यागकर विषमभाव अर्थात् तीसरे, पांचवें, सातवें, नवें, ग्यारहवें भावमें बैठा हो तो पुत्रका जन्म

देनेवाला हो। इन योगोंको देख गर्भाधान तथा जन्मसमय तथा प्रश्नकालमें पुरुषकी उत्पत्ति जाननी। कहे भये पुरुष होनेके तथा स्त्री होनेके योगोंके बलाबल विचार कर पुरुष स्त्रीमेंसे एकके संभवका निश्चय कहना चाहिये। इस प्रकरणमें यह जानना चाहिये कि जिस प्रकार गर्भाधानके लग्नसे गर्भका शुभ अशुभपन वर्णन किया है उसी प्रकार जन्मलग्न तथा प्रश्नलग्नसे जानना चाहिये, परन्तु गर्भका पतनादिक तथा प्रसवकाल गर्भाधानके लग्नसे ही जानना चाहिये और जन्मकालसे जिस प्रकार उद्देश किया हो तिसी प्रकार जानना अथवा प्रश्नकालसे भी उसी प्रकार जानना ॥ ११ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मज काशिरामविरचित-भाषाटीकायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः।

जातस्य सत्त्वगुणादिज्ञानं मूर्तिज्ञानं च।

सत्त्वं रजस्तमो वा त्रिंशांशो यस्य भास्करस्तादृक्॥
बलिनः सदृशी मूर्तिर्बुद्धा वा जातिकुलदेशान् ॥१॥

इसके अनन्तर सूतिकाध्याय निरूपण किया जाता है:-तिसमें प्रथम उत्पन्न भयेके सात्त्विकादिक गुणोंके जाननेका विधान कहते हैं। जन्मसमय जिस ग्रहके त्रिंशांशकमें सूर्य हो और उस ग्रहका जो गुण कहा हो सोई गुण उत्पन्न भये प्राणीका कहे। और बली ग्रहके समान मूर्तिको जाति तथा कुल तथा देशोंको जानकर कहे। भाव यह है कि जन्मके समय जो ग्रह बलवान् होवे इसके मूर्तिके समान उत्पन्न भये प्राणीकी मूर्ति कहे। परन्तु जाति तथा कुल तथा देशोंके विचार ले। क्योंकि, चांडाल, शबर, निषाद ये सब अपने जातिसे ही काले होते हैं।

और जिस कुलके माता, पिता, बन्धु, भ्राता, भगिनी, पितामह इत्यादिक गौर होवें तौ उत्पन्न भया प्राणी भी गौर हो, और कर्णाटक देशमें रहनेवाले समस्त काले होते हैं और वैदेह देशमें रहनेवाले सब श्यामवर्ण होते हैं और काश्मीर देशमें रहनेवाले समस्त गौरवर्ण होते हैं ॥ १ ॥

ग्रहाणां सत्त्वादिगुणाः ।

गुरुशशिरवयः सत्त्वं रजः सितज्ञौ तमोऽर्कसुतभौमौ ॥
एतेऽन्तरात्मानः स्वां प्रकृतिं जंतोः प्रयच्छंति ॥ २ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंके सात्त्विकादिक गुण कहते हैं:-गुरु (बृहस्पति), शशी (चन्द्रमा), रवि (सूर्य) ये सत्त्वगुणी हैं। और सित (शुक्र), ज्ञ (बुध) ये रजोगुणी हैं। अर्कसुत (शनैश्चर), भौम (मंगल) ये दोनों तमो गुणी हैं। ये ग्रह जन्तुके अन्तरात्माको अपना स्वभाव देते हैं। भाव यह है कि जिसके त्रिंशांशकमें सूर्य हो और उस ग्रहका जो गुण हो उस गुणका स्वभाव उत्पन्न भये प्राणीका होता है ॥ २ ॥

पूर्वविलग्ने यादृक् नव भागास्तादृशी भवति मूर्तिः ॥
यो वा ग्रहो बलिष्ठस्तत्काले तादृशी वाच्या ॥ ३ ॥

पूर्व लग्नके विषे जैसा नवांशक हो तैसे ही मूर्ति उत्पन्न भये प्राणीकी होवे है। भाव यह है कि तत्काल लग्नमें जो नवांशक उदय हो और उस नवांशकके स्वामीकी जैसी मूर्ति हो तैसे ही मूर्ति उत्पन्न भये प्राणीकी कहे। अथवा तत्काल लग्नके विषे जो ग्रह बली हो तिस ग्रहके समान मूर्ति कहनी चाहिये ॥ ३ ॥

जातस्य पितुः सन्निधानम् असान्निधानं च ।

चन्द्रे लग्नमपश्यति मध्ये वा शुक्रसौम्ययोश्चंद्रे ॥
जन्म परोक्षस्य पितुर्यमोदये वा कुजे वास्ते ॥ ४ ॥

इसके अनन्तर उत्पन्न भये प्राणीके समीप पिताका होना वा न होना कहते हैं:-जो चन्द्रमा जन्म लग्नको नहीं देखता हो, अथवा शुक्र और सौम्य (बुध) के बीचमें चन्द्रमा हो अथवा यम (शनैश्चर) का उदय हो अर्थात् शनैश्चर जन्मलग्नमें हो अथवा जन्मलग्नसे अस्त (सप्तम) भावमें कुज (मङ्गल) हो तौ पिताके परोक्षमें प्राणीका जन्म कहे। भाव यह है कि यदि ऐसा योग हो तौ जन्म समय पिता घर न होवे ॥ ४ ॥

परजातस्य ज्ञानम्।

पापयुतोऽर्कः सेंदुः पश्यति होरां न चन्द्रमपि जीवः॥
पश्यति सार्कं नेन्दुं यदि जीवो वा परैर्जातः ॥ ५ ॥

इसके अनन्तर परजात सन्तानयोग कहते हैं:-जन्म समय इन्दु (चन्द्रमा) सहित अर्क (सूर्य) पापग्रहसे युक्त हो। भाव यह है कि जन्मसमय चंद्रमा, सूर्य एक राशिपर होवें और उन्हींके साथमें शनैश्चर वा मङ्गल हो अथवा होरा (जन्मलग्न) और चंद्रमा इन दोनोंको जीव (बृहस्पति न देखते हों अथवा अर्क (सूर्य) सहित इंदु (चंद्रमा) को यदि जीव (बृहस्पति) न देखते हों तो उस प्राणीको परपुरुष कर उत्पन्न भया कहे अर्थात् ऐसे योगमें उत्पन्न भया प्राणी अपने पितासे नहीं जन्मा है॥ ५ ॥

---

१ पिताके समीप न होनेका यदि योग पाया जावे तो यह विचार कि पिता परदेशमें था वा उसी देशमें था। यदि सूर्य चरराशिपर स्थिर होकर दशम स्थानसे भ्रष्ट भया ग्यारहवें तथा बारहवें या नवें या अष्टम भावमें स्थित हो तौ पिताको परदेशमें कहे। और यदि सूर्य स्थिर राशिपर स्थित होकर दशमभावसे भ्रष्ट भये हों तो उसी देशमें कहे और यदि द्विस्वभाव राशिपर स्थित होकर दशमभावसे भ्रष्ट भये हों तो अपने और परदेशके बीचमें कहे और पिताके परोक्ष होनेका योग पाया जावे और सूर्य चरराशि या स्थिरराशि या द्विस्वभाव राशिपर स्थित होकर यदि दशम भावमें स्थित हो तो पिताके परोक्षमें भी समीपता हो अर्थात् पिता हो तो परोक्षमें परन्तु समीपही हो।

सूतिकागृहज्ञानं दीपज्ञानं च ।

द्वारं वास्तुनि केन्द्रोपगाद् ग्रहादसति वा विलग्नर्क्षात् ॥
दीप्तोऽर्कादुदयाद्वर्तिरिंदुतः स्नेहनिर्देशः ॥ ६ ॥

इसके अनंतर सूतिकाके घरका ज्ञान और दीपकज्ञान कहते हैं— केंद्र अर्थात् लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भावमें स्थित भये ग्रहसे सूतिकाके घरमें द्वार कहे । भाव यह है कि केंद्रमें सूर्य होवे तो पूर्वदिशामें सूतिकाके घरका दरवाजा कहे, शुक्र हो तो आग्नेयमें, मङ्गल हो तो दक्षिणमें, राहु हो तो नैर्ऋत्यमें, शनैश्चर हो तो पश्चिममें, चंद्रमा हो तो वायव्यमें, बुध हो तो उत्तरमें, बृहस्पति हो तो ईशानमें कहे । यदि बहुत ग्रह केन्द्रमें हों तो बलवान् ग्रहसे कहे और यदि ग्रह केन्द्रमें न हो तो लग्नके राशिसे ही घरके दरवाजेकी दिशा कहे । यदि मेष, सिंह, धनु राशि लग्नमें हों तो पूर्वदिशामें घरका दरवाजा कहे । वृष, कन्या, मकर हों तो दक्षिणमें । मिथुन, तुला, कुम्भ हो तो पश्चिममें । कर्क, वृश्चिक, मीन हों तो उत्तरमें कहे । और अर्क सूर्यसे दीपक कहे । यदि चरराशिपर सूर्य स्थित हो तो दीपक चलता फिरता कहे, और स्थिरराशिपर स्थित हो तो एक जगह रक्खा कहे, और यदि द्विस्वभावराशिपर स्थित हो तो कभी चलता कभी स्थित कहे । और उदयलग्नसे वर्तिका कहे । यदि लग्नका आरंभ ही हो तो किंचिन्मात्रही जली बत्ती कहे । और यदि लग्नका अन्त हो तो समस्त बत्ती जली भई कहे । और बीचमें जितने भाग लग्न बीता हो उतने भाग बत्ती जली कहे । और इन्दु (चन्द्रमा) से तैल को कहे । यदि राशिके आदिमें ही चन्द्रमा स्थित हो तो दीपक तैलसे भरा कहे । और यदि राशिके अन्तमें चंद्रमा स्थित हो तो दीपक तैलसे खाली कहे और बीचमें जितने भाग राशिके चन्द्रमा भोगा गया हो उतने ही भाग दीपकमें तैल जल गया हो

और जिस राशिपर जितने भाग भोगनेको चन्द्रमा रहा हो तौ उत-नेही भाग दीपकमें तैल जलनेको और रहा कहना ॥ ६ ॥

सूतिकागृहस्वरूपम् ।

अट्टं नवमथ दग्धं चित्रं सुट्टं मनोरमं जीर्णम् ॥
गृहमर्काद्यैर्वीर्यात् प्रतिवेश्म सन्निकृष्टैश्च ॥७॥

इसके अनन्तर सूतिकाके घरका स्वरूप कहते हैं:-अर्क (सूर्य) आदिक ग्रहोंकर वीर्याधिकके क्रमपूर्वक अट्टढ तथा नवीन तथा दग्ध (जला भया) तथा चित्र (विचित्र) तथा सुट्टढ तथा मनोहर (सुन्दर) तथा जीर्ण (पुराना) सूतिकाका घर कहे । भाव यह है कि सब ग्रहोंसे सूर्य अधिक बली होवे तौ सूतिकाका घर अट्टढ (कच्चा, बेमजबूत) और चंद्रमा अधिक बली होवे तौ नवीन और मंगल अधिक बली हो तौ जला भया और बुध अधिक बली होवे तौ चित्रविचित्रकी कारीगरीसे युक्त और बृहस्पति अधिक बली हो तौ सुट्टढ (मजबूत), शुक्र अधिक बली हो तौ सुन्दर (रमणीक) और शनैश्चर अधिक बली हो तौ जीर्ण (पुराना) सूतिकाका घर कहे । और सन्निकृष्ट अर्थात् समीपवर्ती ग्रहोंकर प्रतिवेश्म अर्थात् स्थानके प्रति स्थान कहे । भाव यह है कि गृहदाता ग्रहके अगारी वा पिछारी वा आसपास और अधिक बली ग्रह स्थित हों तौ तिसी क्रमकर सूतिकाके घरके प्रति और स्थान कहे । जो सूर्य हो तौ देवस्थान, चन्द्रमा हो तौ जलस्थान, मंगल हो तौ अग्निस्थान, बुध हो तौ निद्रास्थान, बृहस्पति हो तो कोशधनादिकयुक्त स्थान कहे, शुक्र हो तौ क्रीडा स्थान, शनैश्चर हो तौ मलिन दूषित स्थान कहे ॥ ७ ॥

---

१ समस्त स्थानमें सूतिकागृह ज्ञान विशेष लिखते हैं:-मेष, तुला, कर्क, वृश्चिक, कुम्भ लग्न होवें तौ समस्त घरमें पूर्वकी तरफ सूतिकाका घर कहे । धनु, मीन, मिथुन, कन्या लग्न होवें तौ समस्त स्थानमें उत्तरको सूतिकाका गृह कहें । और वृष लग्न हो तौ पश्चिमको सूतिकाका घर-

गृहभूमिकाशालादिज्ञानम् ।

गुरुरुच्चे दशमस्थो द्वित्रिचतुर्भूमिकं करोति गृहम् ॥
धनुषि सबले विशालं द्विशालमन्येषु यमलेषु ॥ ८ ॥

इसके अनन्तर गृहभूमिकाशालाज्ञान कहते हैं:-गुरु (बृहस्पति) उच्चका होकर दशम भावमें स्थित हो तौ उस गृहको द्वित्रिभूमिक कहते हैं । तात्पर्य यह है कि यदि बृहस्पति दशम भावमें परमोच्च भागसे निकल कर बैठा हो तौ उस घरको दुपट कहे । और यदि परमोच्च भागसे नीचे मिथुनका होकर दशम भावमें बैठा हो तौ उस घरको तिपट कहे । और यदि परमोच्च भागमें स्थित होकर दशम भावमें स्थित हों तौ उस घरको चौपट कहे । और यदि धनुराशिपर स्थित होकर दशमभावमें बली बृहस्पति होवे तौ उस घरको तिम्मंजला कहे । और यदि अन्य यमल (द्विस्वभाव) अर्थात् मिथुन, कन्या, मीन राशियोंको दशमभावमें बली होकर स्थित हो तौ द्विशाल (दुम्मंजला) स्थान कहे ॥ ८ ॥

सूतिकाखट्वाज्ञानम् ।

षट् त्रिनवांत्याः पादाः खट्वांगान्यंतरालभवनानि ॥
विनतत्वं यमलर्क्षैः क्रूरैस्तत्तुल्यमुपघातः ॥ ९ ॥

इसके अनन्तर खट्वांगस्वरूप कहते हैं:-लग्नकुंडलीमें छठा, तीसरा, नवम, अन्त्य (बारहवां) राशि खट्वाके पाये हैं और बीचके स्थान खट्वाके अंग हैं इन स्थानोंपर यमलर्क्ष

-कहे । और मकर, सिंह लग्न होवें तौ दक्षिणको सूतिकाका घर कहे । सूतिकाके घरमें शयनस्थान निश्चय करते हैं:-मेष, वृष लग्न हों तौ पूर्वकी तरफ घरमें सूतिकाका शयन कहे, और मिथुन हो तौ आग्नेयदिशाकी तरफ, और कर्क, सिंह होवें तौ दक्षिणकी तरफ, कन्या होवे तौ नैर्ऋत्यकी तरफ, तुला, वृश्चिक होवे तौ पश्चिमकी तरफ, धनु होवे तौ वायव्यकी तरफ, और मकर, कुम्भ होवें तौ उत्तरकी तरफ, मीन हो तौ ईशानकी तरफ सूतिकाका शयन कहे ।

द्विस्वभाव राशियों कर खट्टाके अङ्गोंकी नम्रता कहे और पापग्रहों कर तिस ग्रहके समान उपघात कहे। तात्पर्य यह है कि लग्नकुण्डलीमें तीसरा और बारहवां भाव खट्टाके शिरानेके पाये हैं और छठा और नवां भाव खाटके पांयतके पाये हैं। तिनमें तीसरा भाव शिरानेका सीधा पाया है,और बारहवां भाव शिरानेका बांया पाया है और छठा भाव पांयतका सीधा पाया है और नववां भाव पांयतका बांया पाया है। लग्न और दूसरा भाव शिरानेकी पाटी है,और चतुर्थ और पंचम भाव दाहिनी पाटी है और ग्यारहवां तथा दशवां भाव बांई पाटी है, और सप्तम और अष्टम भाव पांयतकी पाटी है। जिस लग्नमें जन्म होवे उस लग्नकी जो दिशा है उस दिशामें खाटका शिराना कहे, और जिस खाटके अंगके द्विस्वभाव राशि होवे उस खाटके अंगको नमा भया कहे और जिस खाटके अंगके विषे पाप ग्रह हो उस खाटके अंगमें ग्रहतुल्य उपघात कहे। जो सूर्य हो तो बेमजबूत (अदृढ) कहे, मंगल हो तो जला भया और शनैश्चर हो तो पुराना कहे और यदि द्विस्वभाव राशि शुभ ग्रह वा स्वामीसे युक्त हो तो उस खाटके अंगको नमा भया न कहे, और यदि पापग्रह उच्चका वा त्रिकोणका वा अपने घरका अथवा अपने मित्रके घरका होवे तो उस खाटके अंगको उपघातयुक्त न कहे ॥ ९ ॥

नालवेष्टितादिलक्षणम्।

छागसिंहवृषैर्लग्ने तत्स्थे सौर्येऽथवा कुजे ॥
राश्यंशसदृशे गात्रे जायते नालवेष्टितः ॥ १० ॥

इसके अनन्तर नालवेष्टित जन्मज्ञान कहते हैं-छाग (मेष), सिंह, वृष राशि लग्नमें हों और सौरी (शनैश्चर) वा कुज (मंगल) तिनपर स्थित हों तो राशिके नवांशकके समान अंगमें नालसे लिपटा भया उत्पन्न होवे। भाव यह है कि मेष, सिंह, वृष राशियोंमें एक

34165

राशी जन्मलग्नमें होवे और उसी राशिपर शनैश्चर वा मंगल स्थित हो तो नालसे लिपटे भये प्राणीका जन्म कहे। परंतु उस अंगमें नाल लिपटा हो, जिस अंगपर कि कालपुरुषके तत्काल राशिके नवांशककी राशि स्थित हो ॥ १० ॥

सूतिकागृहे द्रव्यज्ञानम् ।

अर्कादिताम्र १ मणि २ हेम ३ शुक्ति ४ रौप्याणि ५ मौक्तिकं ६ लोहम् ७ ॥ वक्तव्यं बलवद्भिः स्वस्थाने हेमजीवेऽपि ॥ ११ ॥

इसके अनन्तर सूतिकाके घरमें द्रव्यज्ञान कहते हैं:-अर्क (सूर्य) से आदि लेकर क्रमसे तांबा, मणि, सुवर्ण, शुक्ति, चांदी, मोती, लोहा इत्यादिक बलवान् ग्रहोंकर कहे । भाव यह है कि यदि सब ग्रहोंसे सूर्य अधिक बली हो तो सूतिकाके घरमें तांबा विशेष कहे, और यदि चंद्रमा बली होवे तो मणि, और मङ्गल बली होवे तो सुवर्ण बुध बली होवे तो कांसी पीतल रांग इत्यादिक और बृहस्पति बली होवे तो चांदी, और शुक्र बली होवे तो मोती अथवा जडाऊ भूषण और यदि शनिश्चर बली होवे तो लोहा कहे । परन्तु जीव(बृहस्पति) यदि अपने स्थानमें धनु मीनका हो तो चांदी न कहे, किन्तु सुवर्ण कहे ॥ ११ ॥

उपसूतिकाज्ञानम् ।

शशिलग्नांतरसंस्थग्रहतुल्याः सूतिकाश्च वक्तव्याः ॥ उदगर्धेऽभ्यंतरगा बाह्याश्चक्रस्य दृश्यार्धे ॥ १२ ॥

इसके अनन्तर उपसूतिकाज्ञान कहते हैं:-शशी (चंद्रमा) और लग्नके बीचमें स्थित जो ग्रह तिनके समान उपसूतिका कहनी चाहिये । भाव यह है कि लग्न और चंद्रमाके बीचमें

जितने ग्रह हों उतनीही उपमूतिका कहे। परन्तु जो ग्रह लग्न और चंद्रमाके बीचमें वक्री वा उच्चका हो तौ उस ग्रहकी तिगुनी संख्या कहे। और जो ग्रह वर्गोत्तम नवांशकमें अथवा अपने राशि, द्रेष्काण नवांशकमें स्थित हो तौ उस ग्रहकी दुगुनी संख्या कहे। और उपमूतिकाओंका रूप, जाति, अवस्था, वर्ण आदिक ग्रहोंके रूप, जाति, अवस्थादिकके अनुसार कहे। और लग्न चंद्रमाके बीचमें स्थित भये ग्रहोंमेंसे जितने ग्रह उदगर्धचक्र अर्थात् जितने अंश लग्नके उदय होनेके रहे हों, वह और द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम. षष्ठ, सप्तम भावके उतने अंश जितने कि लग्नके उदय होनेको रहे हैं, यदि इनमें स्थित हो तौ उतनी स्त्री स्थानके भीतर कहे। और यदि लग्न चंद्रमाके बीचमें स्थित भये ग्रहोंमेंसे जितने ग्रह दृश्यार्ध अर्थात् जितने अंश लग्नके बीते हों वह और द्वादश, एकादश दशम, नवम, अष्टम और सप्तम भावके उतने अंश जितने कि लग्नके अंश बीत गये हों, यदि इनमें स्थित हों तो उतनीही स्त्री स्थानसे बाहिर कहे॥ १२॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचितभाषाटीकायां चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः।

चंद्रात् अरिष्टज्ञानम्।

षष्ठाष्टमेऽपि चन्द्रः सद्यो मरणाय पापसंदृष्टः॥
अष्टाभिः शुभदृष्टो वर्षैर्मिश्रैस्तदर्धेन॥ १॥

इसके अनन्तर अरिष्टाध्याय निरूपण किया जाता है:-जिसके जन्मलग्नसे छठे वा अष्टम भावमें चंद्रमा स्थित हो और पापग्रहोंने देखा हो तो शीघ्रही उत्पन्न भये प्राणीके मृत्युके लिये

कहे । अथवा छठे वा अष्टम भावमें भया चंद्रमा शुभग्रहोंने देखा हो और पापग्रहोंने नहीं देखा हो तो आठ वर्षकर मृत्युके लिये कहे अर्थात् आठ वर्ष पीछे उत्पन्न भये प्राणीकी मृत्यु हो । अथवा छठे वा अष्टम भावमें स्थितभया चंद्रमा मिश्र अर्थात् शुभग्रह और पापग्रह दोनोंने देखा हो तो उसके आधे अर्थात् चार वर्ष करके मृत्युके लिये कहे । भाव यह है कि यदि छठे वा अष्टम भावमें स्थित भये चंद्रमाको शुभ ग्रह और पाप ग्रह दोनों देखते हों तो चार वर्ष पीछे मरण कहे । यदि छठे वा अष्टम भावमें स्थित चंद्रमाको शुभग्रह विशेष देखते हों, और पापग्रह कम देखते हों तो त्रैराशिकसे वर्ष निकालकर कहें । परन्तु छठे वा अष्टम भावमें स्थित भये चंद्रमाको शुभ वा पापग्रह कोई भी न देखता हो तो मृत्युकारक योग नहीं होवे है ॥ १ ॥

अरिष्टांतरम् ।

शशिवत्सौम्याः पापैर्वक्रीभिरवलोकिता न शुभदृष्टाः ॥
मासेन मरणदाः स्युः पापजितो लग्नपश्चास्ते ॥ २ ॥

चन्द्रमाके समानही सौम्य शुभ ग्रह वक्रगतिवाले पापग्रहोंने देखे हों और शुभ ग्रहोंने नहीं देखे हों तो मासकरही उत्पन्न भये प्राणीको मृत्यु देनेवाले होवें । भाव यह है कि यदि चंद्रमाके समान ही कोई शुभग्रह जन्मलग्नसे छठे वा अष्टम भावमें स्थित हो,और वक्री भया पाप ग्रह देखता हो, और शुभ ग्रहकी दृष्टि होवे नहीं तो एक महीने पीछे उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु हो जावे । अथवा जन्मलग्नका स्वामी जन्मलग्नसे अस्त (सप्तम भाव) में स्थित हो, और पापग्रहसे युक्त वा देखा गया हो वा पापग्रहने जीतलिया[1] हो तो भी मासकर केही मृत्यु कहे ॥ २ ॥

---

१ जीतलक्षण लिखते हैं–दक्षिणदिग्गतपरुषो वेपथुरप्राप्य सन्निवृत्तोऽणुः । अधिरूढो विकृतो निष्प्रभो विवर्णश्च यः स जितः ॥

राश्यंतस्थैः पापैः संध्यायां हिममयूखहोरायाम् ॥
मृत्युः प्रत्येकस्थैः केंद्रेषु शशांकपापैश्च ॥ ३ ॥

जन्मलग्नके समय पापग्रह राशिके अन्तमें स्थित हों अर्थात् पापग्रह जिस राशिपर हों उस राशिके नवम नवांशकमें स्थित हों, और सन्ध्यासमय और लग्नमें हिममयूख(चन्द्रमा) का होरा हो तो उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु होवे । अथवा तिसी समय केंद्र लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भावोंके विषे शशांक (चन्द्रमा) और पापग्रह सूर्य, मंगल, शनैश्चर ये हर केंद्रमें स्थित हों तौ भी उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु कहे ॥ ३ ॥

अरिष्टयोगद्वयमित्यादि ।

चक्रप्राक्पश्चार्द्धे पापशुभैः कीटभोदये मृत्युः ॥
निधनचतुष्टयगै ८ । १ । ४ । ७ । १० । र्वा क्रूरैः क्षीणे शशिन्युदये ॥ ४ ॥

चक्रके पूर्वार्द्ध और परार्द्धमें क्रमसे पापग्रह और शुभ ग्रह हों और कीटभ अर्थात् कर्क, वृश्चिक राशियोंमेंसे किसीका उदय हो तो उत्पन्न भयेका मृत्यु कहे । भाव यह है कि जन्मकुंडलीमें जितने अंश लग्नके उदय होनेको रहे हों उतनेही अंश दशम भावकी लग्नको लेकर एकादश, द्वादश, लग्न, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थके उतने अंश ले, जितने कि लग्नके अंश बीते हैं इनकी जन्मकुण्डलीमें पूर्वार्द्ध संज्ञा है । और जितने अंश लग्नके उदय होनेको रहे हों उतने अंश चतुर्थ राशिसे लेकर पंचम, षष्ठ सप्तम, अष्टम, नवम और दशम भावके उतने अंश ले, जितने कि लग्नके अंश बीते

१ संध्यालक्षण लिखते हैं-अर्धास्तमयात्सन्ध्या व्यक्तीभूता न तारका यावत् । रजःपरिहानिमुखाद्धानोरर्धोदयं यावत् ॥

हों इनकी लग्न कुंडलीमें परार्द्ध संज्ञा है। यदि पूर्वार्द्धमें पाप ग्रह हों और परार्द्धमें शुभ ग्रह हों और कर्क या वृश्चिक लग्न हो तो निश्चयही मृत्यु कहे। अथवा पाप ग्रह निधन (अष्टम भाव) और चतुष्टय लग्न चतुर्थ, सप्तम, दशम भावमें स्थित हों और क्षीण शशी (चन्द्रमा) उदय लग्नमें हो तौ भी उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु कहे ॥ ४ ॥

सप्ताष्टांत्योदयगे शशिनि सपापे शुभक्षणवियुक्ते ॥
न च कंटकेऽस्ति कश्चिच्छुभस्तदा मृत्युरादेश्यः ॥ ५॥

और शशी (चन्द्रमा) पापग्रहके साथ सप्तम वा अष्टम वा अन्त्य (बारहवां) वा उदय लग्न भावमें बैठा हो, और शुभग्रहकी दृष्टिसे वर्जित हो, अर्थात् उसको शुभग्रह नहीं देखता हो, और न शुभग्रहके साथमें युक्त हो, और कंटक लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भावमें कोई शुभग्रह भी न हो तो मृत्यु कहे ॥ ५ ॥

चतुरस्रे सप्तमगः पापांतस्थः शशी मरणदाता ॥
उदयगतो वा चन्द्रः सप्तमराशिस्थितैः पापैः ॥ ६ ॥

शशी (चन्द्रमा) पापग्रहोंके बीचमें स्थित होकर चतुरस्र अर्थात् चतुर्थ, अष्टम, अथवा सप्तम भावमें स्थित हो तो उत्पन्न भये प्राणीको मृत्यु देवे। अथवा चन्द्रमा उदय लग्नमें स्थित हो और पापग्रह लग्नसे सप्तम राशिपर स्थित हो तौ भी मृत्यु कहे ॥ ६ ॥

क्षीणेंदौ द्वादशगे लग्नाष्टमराशिसंस्थितैः पापैः ॥
सौम्यै रहितैः केंद्रैः सद्यो मृत्युर्विनिर्देश्यः ॥ ७ ॥

और जन्मलग्नसे क्षीण इन्दु (चंद्रमा) बारहवें भावमें स्थितहो और पापग्रह लग्न तथा अष्टम राशिपर स्थित हो, और केंद्र लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव शुभग्रहोंकर वर्जित होवें अर्थात् केंद्रमें शुभ ग्रह होवे नहीं तो उत्पन्न भये प्राणीका शीघ्रही मृत्यु कहे ॥ ७ ॥

सोपप्लवे शशांके सक्रूरे लग्नगे कुजेऽष्टमगे ॥
मृत्युर्मात्रा सार्द्धं चंद्रवदर्के सशस्त्रेण ॥ ८ ॥

सोपप्लव अर्थात् गहणकालसहित और पापग्रहसहित चंद्रमा लग्नमें स्थित हो और कुज (मंगल) लग्नसे अष्टम भावमें स्थित हो तो माताके सहित उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु हो। भाव यह है कि चंद्रमाके ग्रहणकालमें चंद्रमा शनैश्चरसहित लग्नमें बैठा हो और मंगल अष्टम भावमें स्थित हो तो मातासहित उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु कहे। और यदि चंद्रमाके समान अर्क (सूर्य) होवे तो शस्त्रके साथ माता सहित मृत्यु कहे। भाव यह है कि यदि सूर्यके ग्रहणकालमें शनैश्चरसहित सूर्य लग्नमें बैठा हो और लग्नसे अष्टम भावपर मंगल बैठा हो तो उत्पन्न भये प्राणीका और उसकी माताका शस्त्रसे मृत्यु होवे ॥ ८ ॥

लग्नद्वादशनवनैधनसंस्थितैश्चन्द्रसौरिसूर्यारैः ॥
जातस्य भवति मरणं यदि न बलयुतः पतिर्वचसाम्॥९॥

चंद्रमा और सौरि (शनैश्चर), सूर्य और (मंगल) ये क्रमसे लग्न, बारहवें, नवममें, नैधन (आठवें) भावपर बैठे हों अर्थात् लग्नमें चंद्रमा बारहवेंमें शनैश्चर नवममें सूर्य अष्टममें मंगल बैठे हों तो उत्पन्न भये प्राणीका मरण हो । जो वाणीपति (बृहस्पति) बली न होवे और यदि बृहस्पति बली हो तो मृत्यु नहीं होवे ॥ ९ ॥

सुतमदननवांत्यलग्नरंध्रेष्वशुभयुतो मरणाय
शीतरश्मिः ॥ भृगुसुतशशिपुत्रदेवपूज्यैर्यदि
बलिभिर्न युतोऽवलोकितो वा ॥ १०॥

शीतरश्मी (चंद्रमा) अशुभ ग्रहसे युक्त होकर सुत (पंचम) मदन (सप्तम), नवम, अंत्य (द्वादश), लग्न, रंध्र (अष्टम) इन

भावोंमेंसे किसीपर स्थित हो और बलवान् भृगुसुत (शुक्र), शशिपुत्र (बुध), देवपूज्य, (बृहस्पति), इन ग्रहों करके न युक्त न देखा गया हो तो उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु हो। भाव यह है कि पापग्रह सहित चंदमा लग्न, पंचम, सप्तम, अष्टम, नवम, द्वादश भावोंमेंसे किसी एक भावपर बैठा हो और बली होकर शुक्र बुध बृहस्पतिने न देखा हो वा न युक्त हो तो उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु होवे ॥ १० ॥

अरिष्टकालज्ञानम् ।

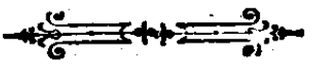
योगे स्थानं गतवति बलिनश्चन्द्रे स्वं वा तनुगृहमथवा पापैर्दृष्टे बलवति मरणं वर्षस्यांतः किलमुनिगदितम्। ११।

इसके अनन्तर नहीं कहा है मरणकाल जिनका ऐसे अरिष्टोंका काल ज्ञान कहते हैं—जिस अरिष्टयोगमें उत्पन्न भये प्राणीका मरण-कालविधि नहीं कहा है तिस योगमें उत्पन्न भये प्राणीके जो ग्रह मृत्युकारक योगके करनेवाले हैं, तिनके मध्यमें जो ग्रह बली हो सो जिस राशिपर जन्मसमयमें बैठा हो तिस राशिपर चन्द्रमा चार गतिकर जब आवै अथवा जन्मसमय चन्द्रमा जिस राशिपर बैठा हो और फिर चारगतिकर उसी राशिपर जब आवै अथवा जन्मसमय जिस राशिपर चन्द्रमा बैठा हो उस राशिसे तनु (लग्न) राशिपर जब आवै तब ही वर्षके भीतर उत्पन्न भये प्राणीका मरण मुनिजनोंने कहा है। यदि कहो कि चन्द्रमा तो हर महीनेमें सब राशियोंपर घूम आता है तुम वर्षके भीतर अवधि क्यों कहते हो ? तहां कहते हैं कि जब चंद्रमा बलवान् हो और पापग्रहोंकर देखा जावे तबही मृत्यु कहे । तात्पर्य यह है कि जब पहिले कहे भये स्थानोंमेंसे किसी स्थानपर चंद्रमा बलवान् होकर आवे और पापग्रह देखते हों तो तब ही वर्षके भीतर उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु कहे । क्योंकि जिन मत्युयोगोंका काल नहीं कहा है वह योग वर्षको उल्लं-

घन नहीं करते हैं, अर्थात् वर्ष भीतर ही इस कहे भये समयके अनुसार उत्पन्न भये प्राणीका मृत्यु करते हैं ॥ ११ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचितभाषाटीकायामरिष्टाऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः ।



अरिष्टभंगाध्यायः ।

सर्वानिमानतिबलः स्फुरदंशुजालो लग्नस्थितः प्रशमयेत्सुरराजमंत्री ॥ एको बहूनि दुरितानि सुदुस्तराणि भक्त्या प्रयुक्त इव शूलधरप्रणामः ॥ १ ॥

इसके अनन्तर अरिष्टभंगाध्याय निरूपण कियाजाता है:-प्रकाशमान है किरणोंका समूह जिसका ऐसे सुरराजमंत्री (बृहस्पति) अति बली होकर लग्नमें बैठे हों तौ इन कहे भये समस्त अरिष्टोंको नाश करे; जैसे भक्तिकर प्रयुक्त किया गया एकही शूलधर शिवका प्रणाम बहुतसे दुस्तर पापोंको नाश कर देता है। भाव यह है कि उदयके बृहस्पति बलवान् होकर लग्नमें बैठे हों तौ समस्त अरिष्टोंको नाश करते हैं, जैसे भक्ति पूर्वक शिवको प्रणाम समस्त पापोंका नाश कर देता है ॥ १ ॥

लग्नाधिपोऽतिबलवानशुभैरदृष्टः केंद्रस्थितैः शुभखगैरवलोक्यमानः ॥ मृत्युं विधूय विदधाति सुदीर्घमायुः सार्द्धं गुणैर्बहुभिरूर्जितया च लक्ष्म्या ॥ २ ॥

लग्नका स्वामी अतिबली हो और पापग्रहोंने देखा न हो और केन्द्र लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भावमें बैठे भये शुभग्रहोंने देखा हो

तौ मृत्युयोगको दूर करके श्रेष्ठ लक्ष्मी और बहुत गुणोंसहित दीर्घ अवस्था करते हैं ॥ २ ॥

लग्नादष्टमवर्त्यपि गुरुबुधशुक्रद्रेष्काणगश्चंद्रः ॥
मृत्युं प्राप्तमपि नरं परिरक्षत्येव निर्व्याजम् ॥ ३ ॥

चन्द्रमा लग्नसे अष्टमभाववर्त्ती भी हो परन्तु गुरु (बृहस्पति) तथा बुध तथा शुक्रके द्रेष्काणमें स्थित हो तो मृत्युको प्राप्त भयेभी पुरुषको निष्कपट होकर रक्षा करता है ॥ ३ ॥

चन्द्रः संपूर्णतनुः सौम्यर्क्षगतः स्थितः शुभस्यांतः ॥
प्रकरोत्यरिष्टभंगं विशेषतः शुक्रसंदृष्टः ॥ ४ ॥

परिपूर्णशरीर चंद्रमा शुभग्रहोंकी राशिपर स्थित होकर शुभ ग्रहोंके बीचमें बैठा हो तो अरिष्टका नाश करे, परन्तु शुक्रने देखा हो तो विशेषही अरिष्टका नाश करे ॥ ४ ॥

बुधभार्गवजीवानामेकतमः केन्द्रमागतो बलवान् ॥
यद्यपि क्रूरसहायः सद्योऽरिष्टस्य भंगाय ॥ ५ ॥

बुध और भार्गव (शुक्र) और जीव (बृहस्पति) इनमेंसे एक भी बलवान् होकर केंद्र लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भावको प्राप्त हो और यद्यपि पापग्रह सहायी हो तो भी शीघ्रही अरिष्टके नाशके लिये हो ॥ ५ ॥

रिपुभवनगतोऽपिशशी गुरुसितचन्द्रात्मजद्रेकाणस्थः॥
गरुड इव भोगिदष्टं परिरक्षत्येव निर्व्याजम् ॥ ६ ॥

रिपु (छटे) स्थानमें बैठा भयाभी शशी (चंद्रमा), गुरु (बृहस्पति), सित (शुक्र), चंद्रात्मज (बुध) इनके द्रेष्काणमें स्थित हो तो निष्कपटही रक्षा करे, जैसे सर्पके काटे भयेको गरुड रक्षा करता है ॥ ६ ॥

सौम्यद्वयांतरगतः संपूर्णः स्निग्धमंडलः शशभृत् ॥
निशेषारिष्टहन्ता भुजंगलोकस्य गरुड इव ॥ ७ ॥

परिपूर्ण स्निग्धमंडल शशभृत् (चन्द्रमा) दो शुभ ग्रहोंके बीचमें स्थित हो तो समस्त अरिष्टका नाश करनेवाला हो; जैसे गरुड सर्प-लोकका नाश करनेवाला है ॥ ७ ॥

शशभृत्पूर्णशरीरे शुक्ले पक्षे निशाभवे काले ॥
रिपुनिधनस्थेऽरिष्टं प्रभवति नैवात्र जातस्य ॥ ८ ॥

शुक्लपक्षमें रात्रिसमय पूर्णशरीर शशभृत् (चन्द्रमा) लग्नसे रिपु (छठे) निधन (अष्टम भाव) में बैठा हो तो इस योगमें उत्पन्न भये प्राणीको अरिष्ट नहीं समर्थ होवे है ॥ ८ ॥

प्रस्फुरितकिरणजाले स्निग्धामलमंडले बलोपेते ॥
सुरमन्त्रिणि केन्द्रगते सर्वारिष्टं शमं याति ॥ ९ ॥

प्रकाशमान होरहे हैं किरणसमूह जिसके और निर्मल है मंडल जिसका ऐसा बलसे युक्त सुरमंत्री (बृहस्पतिजी) केंद्र लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भावमें बैठे हों तो समस्त अरिष्ट नाशको प्राप्त होवे हैं ॥ ९ ॥

सौम्यभवनोपयाताः सौम्यांशकसौम्यद्रेकाणस्थाः ॥
गुरुचंद्रकाव्यशशिजाः सर्वेऽरिष्टस्य हंतारः ॥ १० ॥

गुरु (बृहस्पति), चंद्रमा, काव्य (शुक्र), शशिज (बुध) ये सब शुभ ग्रहोंके राशिपर बैठे हों, अथवा शुभग्रहोंके नवांशकमें वा शुभग्रहोंके द्रेष्काणमें बैठे हों तो अरिष्टके नाश करनेवाले हों ॥ १० ॥

चंद्राध्यासितराशेरधिपः केंद्रे शुभग्रहो वापि ॥
प्रशमयत्यरिष्टयोगं पापानि यथा हरिस्मरणम् ॥ ११ ॥

चन्द्रमाका अध्यासित राशिका स्वामी अर्थात् जिस राशिपर चन्द्रमा बैठा हो उस राशिका स्वामी केन्द्र अर्थात् लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम, भावमें बैठा हो अथवा शुभग्रह हो तो अरिष्टयोग को नाश करता है, जैसे पापोंको हरिका स्मरण नाश करता है ॥ ११ ॥

पापा यदि शुभवर्गे सौम्यैर्दृष्टाः शुभेशवर्गस्थैः ॥
निघ्नंति तदाऽरिष्टं पतिं विरक्ता यथा युवतिः ॥ १२ ॥

पापग्रह यदि शुभग्रहोंके राशि, होरा, द्रेष्काण, नवांशक, द्वादशांशक, त्रिंशांशकमें बैठे हों और शुभग्रहके राशि, होरा, द्रेष्काण, नवांशक द्वादशांशक, त्रिंशांशकमें बैठे भये शुभ ग्रहोंने देखे हों तो अरिष्टको नाश करते हैं; जैसे विरक्ता स्त्री पतिको नाश करती है ॥ १२ ॥

राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात्सौम्यैर्निरीक्षितः सद्यः ॥
नाशयति सर्वदुरितं मारुत इव तूलसंघातम् ॥ १३ ॥

लग्नसे यदि तीसरे तथा छठे तथा लाभ (ग्यारहवें) भावमें राहु बैठा हो और शुभग्रहोंने देखा हो तो शीघ्रही समस्त दुरित अरिष्टोंको नाश करता है, जैसे तूलके समूहको पवन नाश करता है ॥ १३ ॥

शीर्षोदयेषु राशिषु सर्वे गगनाधिवासिनः सूतौ ॥
प्रकृतिस्थैश्चारिष्टं विलीयते घृतमिवाग्निस्थम् ॥ १४ ॥

शीर्षोदय अर्थात् मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ इन राशियोंके विषे यदि जन्मकालमें समस्त गगनाधिवासी ग्रह बैठे हों तो समस्त अरिष्ट विला जाते हैं; जैसे अग्निमें डाला भया घृत क्षणमात्रमें विला जाता है । भाव यह है कि समस्त ग्रह प्रकृतिमें स्थित होकर मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ राशियोंपर बैठे हों तो समस्त अरिष्ट विला जाते हैं, जैसे अग्निमें घृत विला जाता है ॥ १४ ॥

तत्काले यदि विजयी शुभग्रहःशुभनिरीक्षितोऽवश्यम् ॥
नाशयति सर्वारिष्टं मारुत इव पादपान् प्रबलः ॥१५॥

यदि तत्काल ही जो शुभग्रह विजयको प्राप्त होकर शुभ ग्रहोंने देखा हो तो समस्त अरिष्टको नाश करता है; जैसे प्रबल पवन वृक्षोंको उखार देता है ॥ १५ ॥

सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टश्चंद्रो विनाशयत्यरिष्टम् ॥
आपूर्यमाणामूर्तिर्यथा नृपः स्वं नयेद्वेषी ॥ १६ ॥

यदि चंद्रमा परिपूर्ण मण्डलाकार होकर समस्त आकाशचारी ग्रहोंने देखा हो तो अरिष्टको नाश करता है; जैसे वैर करनेवाला राजा धनको ले लेता है ॥ १६ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचितभाषाटीकायामरिष्टभंगाध्यायः समाप्तः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमोऽध्यायः ।

ग्रहायुर्दायः ।

राश्यंशकलागुणिता द्वादशनवभिर्ग्रहस्य भगणेभ्यः ॥
द्वादशहृतावशेषेऽब्दमासदिननाडिकाः क्रमशः ॥ १ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंका आयुर्दाय निरूपण किया जाता है:-ग्रहके राशि, अंश, कला पहिले बारह और फिर नौ अर्थात् १०८ करके पृथक् पृथक् गुणे फिर राशिगणोंको बारहसे भाग कर शेष रहनेमें वर्ष, मास, दिन घडी क्रमसे जानने । भाव यह है कि जिस ग्रहका आयुर्दाय निकालना हो उस ग्रहके राशि और अंश और कला और विकलाओंको न्यारा न्यारा रखे और हरएकको १०८ से गुणा करे फिर विकलाओंके गुणनफलमें ६० का भाग दे शेषकी पल संज्ञा है । और लब्ध आये भयेको कलाओंके

गुणनफलमें जोडे फिर ६० का भाग दे शेषकी घडी संज्ञा है। और लब्ध आये भयेको अंशोंके गुणनफलमें जोडे फिर ३० का भाग दे शेषकी दिन संज्ञा है। और लब्ध आये भयेको राशियोंके गुणनफलमें जोडे फिर बारहका भाग दे शेषकी मास संज्ञा है और लब्ध आये भयेकी भगण संज्ञा है। भगणमें १२ का भाग देनेसे शेषकी वर्ष संज्ञा है। और लब्ध आये भयेको त्याग दे। इस प्रकार ग्रहके आयुर्दायके वर्ष, मास, दिन घडी, पल निकलते हैं; जैसे किसी ग्रहके स्पष्ट राशि ३, अंश २९, कला ५९, विकला ५९ यह पृथक् पृथक् १०८ से गुणे तौ ३२४ । ३१३२ ६३७२ । ६३७२ यह चारों राशि अंश कला, विकलाओंका न्यारा न्यारा गुणनफल है। अब विकलाओंके गुणनफलमें ६० का भाग देनेसे बाकी १२ पल रहे। और १०६ लब्ध मिले इनको कलाओंके गुणनफल ६३७२ में जोडा तौ ६४७८ भये, इनमें ६० का भाग देनेसे बाकी ५८ घडी बची । और लब्ध १०७ मिले, इनको अंशके गुणनफलमें जोडा तौ ३२३९ भये इनमें ३० का भाग देनेसे बाकी २९ दिन रहे । और १०७ लब्ध मिले, इनको राशिके गुणनफलमें जोडा तो ४३१ भये, इनमें १२ का भाग देनेसे बाकी ११ महीने रहे । और ३९ लब्ध मिले इनकी भगण संज्ञा है । फिर भगणोंमें १२ का भाग दिया तौ शेष ११ वर्ष रहे। और २ लब्ध मिले इनको त्याग दिया । अर्थात् ११ वर्ष, ११ मास, २९ दिन, ५८ घडी, १२ पल यह उस ग्रहका आयुर्दाय भया । जिस ग्रहके ३ स्पष्ट राशि, २९ अंश, ५९ कला ५९ विकला थीं । इसी प्रकार सब ग्रहोंके स्पष्ट राशि, अंश, कला, विकलाओंसे ग्रहोंका आयुर्दाय निकाले ॥ १ ॥

लग्नायुर्दायः ।

होरादायोऽप्येवं बलयुक्तान्यानि राशितुल्यानि ॥
वर्षाणि सप्रयच्छत्यनुपातात्त्रिंशकादिफलम् ॥२॥

होरा लग्नकाभी आयुर्दाय इसी प्रकार होवे है:-परन्तु जो लग्न बलयुक्त होवे तौ और भी राशिके समान वर्ष देवे है और त्रैराशिकसे अंशकादिक फल कहे । भाव यह है कि जो लग्न बली होवे तो जितने लग्नके राशि बीत गये हों उतनी ही संख्या लग्नके निकाले भये आयुर्दायके वर्षमें जोडे, फिर लग्नके राशिको छोड कर शेष रहे जो अंश, कला, विकला तिन सबकी विकलाही करे: फिर उनको १२ से गुणा करे १८०० का भाग ले जो लब्ध आवे वह मास। और शेषको ३० से गुणाकर फिर १८०० का भाग ले जो लब्ध आवे वह दिन । और शेषको ६० से गुणा कर फिर १८०० का भाग दे जो लब्ध आवे वह घडी । फिर शेषको ६० से गुणा करे फिर १८०० का भाग दे जो लब्ध आवे वह पल । और शेषको त्याग दे फिर लब्ध मिले मास, दिन, घडी, पलोंको क्रमसे लग्नके पहिले निकाले भये आयुर्दायके मास, दिन, घडी, पलोंमें जोड दे इस प्रकार लग्नका आयुर्दाय निकालना ॥ २ ॥

आयुर्दाये विशेषज्ञानम् ।

वर्गोत्तमस्वराशिद्रेष्काणनवांशके सकृद्द्विगुणम् ॥
वक्रोच्चयोस्त्रिगुणितं द्वि त्रिगुणत्वे सकृत्त्रिगुणम् ॥३॥

इसके अनन्तर ग्रहोंका आयुर्दाय विशेष लिखते हैं-जो ग्रह वर्गोत्तम अथवा अपने राशि वा द्रेष्काण वा नवांशकमें बैठा हो तो अपनी आयुर्दायको दुगुना करता है । यदि कहो कि जो ग्रह अपनेही राशिमें स्थित होकर अपने ही नवांशक तथा वर्गोत्तम नवांशक तथा द्रेष्काणमें स्थित हो तो कितनी बार ग्रहके आयुर्दायको दुगुना करे । तहां कहते हैं कि, सकृत् अर्थात् एकवार । भाव यह है कि जिस ग्रहके एकही साथ अपनेही राशि, द्रेष्काण, वर्गोत्तम, नवांशक होवे तो उस ग्रहके आयुर्दायको एक ही वार दुगुना करे न कि बार बार

और जो ग्रह वक्र वा उच्च राशिमें स्थित हो तो उस ग्रहके आयुर्दाय-को तिगुना करे । जिस ग्रहसे द्विगुणा करनेके दो योग पाये जावें तो उस ग्रहके आयुर्दायको तिगुना करे न कि दुगुना और तिगुना भी एकहीवार करे, न कि बारंबार ॥ ३ ॥

शत्रुक्षेत्रहानिः ।

शत्रुक्षेत्रे त्र्यंशं नीचेऽर्द्धं सूर्यलुप्तकिरणाश्च ॥
क्षपयति स्वादायान्नास्तं यातौ रविजशुक्रौ ॥ ४ ॥

मंगलको त्याग शत्रुके घरमें स्थित भया ग्रह अपनी दी भई अवस्थासे त्रिभाग दूर करता है । परन्तु मंगल शत्रुके घरमें स्थित होकर अपने आयुसे त्रिभाग दूर नहीं करता । और जो ग्रह नीच राशिमें स्थित हो तो अपनी अवस्थासे अर्द्धभाग दूर करता है । और सूर्यने लोप की है किरण जिसके ऐसा अस्तग्रहभी अपने अवस्थासे अर्द्धभाग दूर करता है, परन्तु अस्तभावको प्राप्त होकर रविज (शनैश्चर) और शुक्र ये दोनों अपने अवस्थासे अर्द्धभाग दूर नहीं करते ॥ ४ ॥

चक्रपातेन हानिः ।

सर्वार्धत्रिचतुर्थेन्द्रियर्तुभागान् व्ययाद्धरंत्यशुभाः ॥
संतोऽर्धमतो वामं बलवानेकर्क्षगेष्वेकः ॥ ५ ॥

इसके अनन्तर कुण्डलीचक्रकर ग्रहोंकी अवस्थाकी हानि कहते हैं:- व्यय (द्वादश) भावसे उलटे क्रमकर अशुभ ग्रह सर्व भाग,अर्द्धभाग, त्रिभाग, चतुर्थ भाग इन्द्रिय (पंचम) भाग, ऋतु (छटा) भाग इन भागोंको अपने आयुसे दूर करते हैं । भाव यह है कि जो पापग्रह, लग्नसे बारहवें भावमें बैठा हो वह अपने समस्त आयुको दूर करता है । और जो पापग्रह लग्नसे ग्यारहवें भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे अर्धभाग दूर करता

है। और जो पापग्रह दशम भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे त्रिभाग दूर करता है। और जो पापग्रह नवम भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे चौथा भाग दूर करता है। और जो पापग्रह अष्टम भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे पंचम भाग दूर करता है। और जो पापग्रह सप्तम भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे छठा भाग दूर करता है। और शुभ ग्रहभी व्यय (बारहवें) भावसे उलटे क्रमकर इन भागोंका अर्द्धभाग दूर करता है। भाव यह है कि शुभ ग्रह बारहवें भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे अर्द्धभाग दूर करता है। और जो शुभ ग्रह ग्यारहवें भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे चौथाई भाग दूर करता है। और जो शुभ ग्रह दशम भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे छठा भाग दूर करता है। और जो शुभ ग्रह नवम भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे आठवां भाग दूर करता है। और जो शुभग्रह अष्टम भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे दशम भाग दूर करता है। और जो शुभग्रह सप्तम भावमें बैठा हो वह अपने आयुसे बारहवां भाग दूर करता है। और जो बहुतसे ग्रह एक राशिपर बैठे हों उनमें जो एक बलवान् हो वह इन स्थानोंपर स्थित भया अपने कहे भये भाग दूर करता है, न कि समस्त ग्रह ॥ ६ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचित-भाषाटीकायां सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथ अष्टमोऽध्यायः।

दशाप्रमाणम्।

शोध्यक्षेपविशुद्धः कालो यो येन जीविते दत्तः ॥
स विचिंत्यस्तस्य दशा स्वदशासु फलप्रदाः सर्वे ॥ १ ॥

जिस ग्रहने पुरुषोंके जीवनमें शोध्य, हानि और क्षेप गुणना तिन कर शोधा भया जो काल दिया है तिस ग्रहका सो काल दशा मानकर विचारना, क्योंकि समस्त ग्रह अपने दशाओंमें फलदायक होते हैं। भाव यह है कि पहिले निकासे भये आयुर्दायमें पूर्वक्रमसे हानि और गुणन कर जो शुद्ध काल आया है वह ग्रहकी शुद्ध दशा जाननी । उसी दशाके अन्तर्गत ग्रहका शुभ अशुभ फल होवे है ॥ १ ॥

दशाशुभाशुभज्ञानम् ।

मित्रोच्चस्वगृहांशोपगतानां शोभना दशाः सर्वाः ॥
स्वोच्चाभिलाषिणामपि नतु कथितविपर्ययस्थानाम् ॥२॥

दशापतिके जाननेपर तिस ग्रहकी दशाका शुभ अशुभ फल ज्ञान कहते हैं:—मित्रक्षेत्र तथा उच्च तथा अपने स्थान तथा अपने नवांशकमें बैठे भये ग्रहोंकी तथा स्वोच्चाभिलाषी अर्थात् उच्च राशिके बारहवीं राशिके नवांशकमें बैठे भये ग्रहोंकी भी समस्त दशा शुभ होवे है। और इन कहे भये स्थानोंसे विपरीत स्थानोंमें बैठे भये ग्रहोंकी दशा शुभ नहीं होवे है। भाव यह है कि जन्मकालके विषे जो ग्रह मित्रके घरका हो वा अपने उच्चका हो वा अपने राशि वा नवांशकमें बैठा हो उस ग्रहकी दशा शुभ है, और जो ग्रह इनसे विपरीत अर्थात् शत्रुके घरका होवे अथवा शत्रुके नवांशकमें बैठा हो अथवा नीचकाहो उसकी दशा अशुभा है। और इन कहे भये स्थानोंसे अन्य स्थानोंमें बैठे भये ग्रहोंकी मध्यम दशा होवे है ॥ २ ॥

दशाक्रमः ।

लग्नार्कशशांकानां यो बलवांस्तद्दशा भवेत्प्रथमा ॥
तत्केंद्रपणफरापोक्लिमगतानां बलाच्छेषाः ॥ ३ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंकी दशाके प्रमाणमें क्रम कहते हैं:-लग्न और अर्क (सूर्य) और शशांक (चन्द्रमा) इनमें जो ग्रह बलवान् हो उसकी प्रथम दशा होवे है; तिसके अनन्तर केंद्र लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम; फणफर द्वितीय, पंचम अष्टम, एकादश; आपोक्लीम तृतीय, षष्ठ, नवम, द्वादश इन भावोंमें स्थित भये ग्रहोंकी बलपूर्वक क्रमसे शेष दशा जाननी। भाव यह है कि प्रथम दशा उसकी होवे है जो कि लग्न सूर्य, चंद्रमा के बीचमें बली है। तदनन्तर उन ग्रहोंकी दशा होवे है, जो कि केंद्रमें बैठा हो परन्तु प्रथम दशा केंद्रमें बैठे भये ग्रहोंकी क्रमपूर्वक जाननी। तदनन्तर उन ग्रहोंकी दशा होवे है,कि जो पणफर भावमें स्थित है परन्तु उनमें भी बली ग्रहोंकी क्रमपूर्वक प्रथम दशा जाननी। तदनन्तर उन ग्रहोंकी दशा होवे है, जो कि आपोक्लिम भावमें स्थित हैं परन्तु उनमें भी बली ग्रहोंकी क्रमपूर्वक प्रथम दशा जाननी ॥ ३ ॥

लग्नदशाफलम्।

होरादशा द्रेकाणैः पूजितमध्याधमा चरे क्रमशः ॥
द्विशरीरे विपरीता स्थिरेषु पापेष्टमध्यफला ॥ ४ ॥

इसके अनन्तर लग्नदशाका शुभअशुभ फलज्ञान कहते हैं:-चरराशि मेष, कर्क, तुला, मकर राशियों पर द्रेष्काणोंकर क्रमपूर्वक होरालग्नकी पूजित (शुभ), मध्यम, अधम,(अशुभ)दशा जाननी। भाव यह हैं कि चरराशि तौ लग्नमें हो और पहिला द्रेष्काण उदयका हो तौ लग्नकी शुभदशा जाननी। और द्वितीय द्रेष्काणका उदय हो तो मध्यम दशा जाननी। और तृतीय द्रेष्काण का उदय हो तौ अशुभ दशा जाननी। और द्विशरीर अर्थात् द्विस्वभावराशि मिथुन, कन्या, धनु, मीन राशियोंपर द्रेष्काणों कर पूर्व कहे भये कमसे विपरीत जाननी। भाव यह है कि द्विस्वभावराशि लग्नमें हो और प्रथम द्रेष्काणका उदय

हो तो लग्नकी दशा अधम जाननी । और द्वितीय द्रेष्काणका उदय हो तो मध्यम जाननी । और तृतीय द्रेष्काणका उदय हो तो शुभ जाननी । और स्थिर राशि अर्थात् वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशियोंपर द्रेष्काणोंकर क्रमपूर्वक लग्नकी दशा पाप (अशुभ) और इष्ट (शुभ) और मध्यम फलवाली जाननी । भाव यह है कि स्थिरराशि लग्नमें हो और प्रथम द्रेष्काणका उदय हो तो लग्नकी दशा अशुभ जाननी । और द्वितीय द्रेष्काणका उदय हो तो शुभ जाननी और तृतीय द्रेष्काणका उदय हो तो मध्यम जाननी ॥ ४ ॥

अंतर्दशा ।

एकर्क्षेऽर्द्ध त्र्यंशं त्रिकोणयोः सप्तमे तु सप्तांशम् ॥
चतुरस्रयोस्तु पादं पाचयति गतो ग्रहः स्वगुणैः ॥ ५ ॥

इसके अनन्तर अंतर्दशा कहते हैं:—दशापतिके एक राशिपर स्थित भया ग्रह दशापतिकी दीभई आयुमेंसे अर्द्धभाग लेकर अपने गुणोंकरके दशाफल भुगवाता है । और दशापतिके त्रिकोण अर्थात् नवम, पंचम भावमें बैठा भया ग्रह दशापतिकी दी भई आयुसे त्रिभाग लेकर अपने गुणोंकर दशाफल भुगवाता है । और दशापतिसे सप्तम भावमें बैठा भया ग्रह दशापतिकी दी भई आयुमेंसे सप्तम भाग लेकर अपने गुणोंकर दशाफल भुगवाता है । और दशापतिसे चतुरस्र अर्थात् चतुर्थ, अष्टम भावमें स्थित भया ग्रह दशापतिकी दी भई आयुमेंसे पाद अर्थात् चतुर्थ भाग ले अपने गुणोंकर दशाफल भुगवाता है । भाव यह है कि जिस ग्रहकी अन्तर्दशा जाननी उस ग्रहके फलका अन्तर्दशामें यदि एक भाग काल हो तो उस ग्रहके एक राशिपर स्थित भये लग्न वा ग्रहके फलका अन्तर्दशामें अर्द्धभाग काल हो । और यह ग्रहसे नवम, पंचम भावमें स्थित भये लग्न वा ग्रहके फलका अन्त-

दशामें त्रिभाग काल हो। और सप्तमभावमें स्थित भये लग्न वा ग्रहके फलका अन्तर्दशामें सप्तम भाग काल हो। और चतुर्थ अष्टम भागमें स्थित भये लग्न वा ग्रहके फलका अंतर्दशामें चतुर्थ भाग काल हो। इसी प्रकार लग्नसे भी इन स्थानोंमें स्थित भये ग्रहोंका यथोक्त भाग जानना। और यदि एक स्थानपर बहुत ग्रह हों तो उनमें जो बली हो उस ग्रहकी दशापतिकी अन्तर्दशामें अपने भागानुसार दशा होवे है न कि सबकी। और यह भी जानना चाहिये कि प्रथम अन्तर्दशा दशापतिकी होवे है। तदनन्तर एक राशिपर स्थित भये ग्रहकी अन्तर्दशा होवे है। तदनन्तर नवम पंचम भावमें स्थित भये ग्रहकी अन्तर्दशा होवे है। और फिर चतुर्थ, अष्टम भावमें स्थित भये ग्रहकी अन्तर्दशा होवे है, तदनन्तर सप्तम भावमें स्थित भये ग्रहकी अन्तर्दशा जाननी। और यदि नवम, पंचम भाव वा चतुर्थ, अष्टम भाव इन भावोंके यदि दोनों स्थानोंमें ग्रह हों तौ उनमें जो बली हो उसकी पहिले अन्तर्दशा हो, पीछे दूसरेकी अन्तर्दशा हो ॥ ५ ॥

समच्छेदादिदशाविभागः।

भागाः सदृशच्छेदैर्विवर्जिताः संयुता दशाच्छेदाः ॥
प्रत्यंशगुणाकाराः पृथक् पृथक् चांतर्दशास्ताः ॥ ६ ॥

सदृश भागोंकर वर्जित अर्थात् ऊपरके पृथक् पृथक् भाग आपसमें सब मिलकर दशा पिण्डके भागरूप होवे हैं। और प्रत्येक भाग दशापिण्डके गुणाकार होवे हैं। इस प्रकार दशापिण्डमें गुणा भाग करनेसे जो फल मिले वही पृथक् पृथक् अंतर्दशा होवे है। तात्पर्य यह है कि दशापतिकी अंतर्दशा करनेमें दशापति अपनी दीहुई दशामें एक भागका अधिकारी है। और जो ग्रह दशापतिके साथमें स्थित है वह दशापतिकी दी भई आयुमें अर्द्ध भागका अधिकारी है, और जो दशापतिसे नवम, पञ्चम भावमें स्थित है वह दशापतिकी दी भई आयुमें तृतीय भागका

अधिकारी है। और जो दशापतिसे चतुर्थ, अष्टम भावमें स्थित है वह दशापतिकी दी भई आयुमें चतुर्थ भागका अधिकारी है। और जो दशापतिसे सप्तम भावमें स्थित है वह दशापतिकी दी भई आयुमें सप्तम भागका अधिकारी है। इस प्रकार इन स्थानोंमें स्थित भये ग्रहोंके परस्पर भाग रखे, जैसे $\frac{1}{1}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{4}$ $\frac{1}{7}$ इसके अनन्तर परस्पर भागोंको गुणा करे। फिर एक एकको प्रत्येक भाग कर गुणे फिर जो रूप हों उसको रखे, जैसे इनमें नीचेके सदृश भाग हैं इन करके वर्जित अर्थात् पृथक् पृथक् जो ऊपर रूप हैं वह आपसमें मिलकर दशापिण्डके भागरूप होवे हैं।

१६८	८४	५६	२४
१६८	१६८	१६८	१६८

जैसे ऊपरके सब भागोंको जोडा तौ ३७४ भये यह दशापिण्डके भागरूप हैं। और पृथक् पृथक् ऊपरके भाग दशापिण्डके क्रमसे गुणनरूप है, जैसे दशापतिकी दी भई आयुपिण्डके वर्ष, मास, दिन, घडीपर्यन्त लिखकर पृथक् पृथक् गुणाकारसे गुणे। घडियोंमें ६० का भाग देकर जो लब्ध मिले उसको दिनोंके गुणनफलमें जोडे; फिर ३० का भाग देनेसे जो लब्ध मिले उनको महीनोंके गुणनफलमें जोडे; फिर १२ का भाग देनेसे जो लब्ध मिले वह वर्षोंके गुणनफलमें जोडे; शेष रहे घडी दिन, महिनोंको पृथक् पृथक् लिखा रहने दे। फिर वर्षोंमें ३७४ का भाग देनेसे जो लब्ध मिले वह वर्ष होवे है। और शेषको १२ से गुणाकर पहिले शेष रहे महीनोंमें जोडे, फिर ३७४ का भाग दे जो लब्ध मिले वह मास होवे है। और शेषको ३० से गुणाकर पहिले शेष रहे दिनोंमें जोडे, फिर ३७४ का भाग दे जो लब्ध मिले वह दिन होवे है। और शेषको ६० से गुणाकर पहिली शेष रही घडियोंमें जोडे फिर ३७४ का भाग दे जो लब्ध मिले वह घडी होवे है। इस प्रकार ग्रहके अन्तर्दशा वर्ष, मास, दिन, घडी निकलते हैं।

इसी प्रकार सप्तम ग्रहोंकी अन्तर्दशा करनी चाहिये। दशाके विभागके क्रमसे अन्तर्दशाविभागकी कल्पना करने योग्य है। और विदशोपदशाविभाग भी इसी प्रकार जानना ॥ ६ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठवमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचितभाषाटीकायामष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अथ नवमोऽध्यायः।

सूर्याष्टकवर्गः।

केंद्रायाष्टद्विनवस्वर्कः स्वादार्किभौमतश्च शुभः ॥
षट्सप्तांत्येषु सितात् षडायधीधर्मगो जीवात् ॥ १ ॥

इसके अनन्तर रेखाष्टकवर्ग कहते हैं:-जन्मकालमें जिस राशिपर सूर्य स्थित हो उस अपने राशिसे केंद्र १। ४। ७। १० स्थान, आप (११) स्थान, अष्ट (८) स्थान, द्वि (२) स्थान, नव (९) स्थान इन्होंपर अर्क (सूर्य) शुभ होवे है। और आर्कि (शनैश्चर), भौम (मंगल) इनसे भी इन्हीं स्थानोंपर शुभ होवे है। और सित (शुक्र) से षट् (६), सप्त (७), अन्त्य (१२) इन स्थानोंपर शुभ होवे है। और जीव (बृहस्पति) से षट् (६), आय (११), धी (५), धर्म (९) इन स्थानोंपर सूर्य शुभ होवे है ॥ १ ॥

उपचयगोऽर्कश्चंद्रादुपचयनवमांत्यधीयुतः सौम्यात् ॥
लग्नादुपचयबंधुव्ययस्थितः शोभनः प्रोक्तः ॥ २ ॥

और चन्द्रमासे उपचय ३। ६। १०। ११ इन स्थानोंपर अर्क (सूर्य) शुभ होवे है। और सौम्य (बुध) से उपचय ३। ६। १० ११, नवम (९), अन्त्य (१२), धी (५) इन स्थानोंपर शुभ

होवे । और लग्नसे उपचय ३ । ६ । १० । ११, बन्धु (४), व्यय (१२) इन स्थानोंपर सूर्य शुभ होवे है ॥ २ ॥

चन्द्राष्टकवर्गः ।

शश्युपचयेषु लग्नात् साद्यमुनिः स्वात्कुजात्स्वनवधी-भ्यः ॥ सूर्यात्साष्टस्मरगस्त्रिषडायसुतेषुसूर्यसुतात् ॥ ३ ॥

इसके अनन्तर चन्द्रमाका रेखाष्टकवर्ग कहते हैं:—शशी (चन्द्रमा) लग्नसे उपचय ३ । ६ । १० । ११ इन स्थानोंपर शुभ होवे है । और अपने स्थानसे आद्य (१), मुनि (७) इन सहित उपचय ३ । ६ १० । ११ स्थानोंपर अर्थात् १७ + ३ । ६ । १० । ११ स्थानोंपर शुभ है । और कुज (मगल) से स्व (२), नव (९), धी (५) इन स्थानों सहित उपचय । ३ । ६ । १० । ११ स्थानोंपर अर्थात् २ । ९ । ५ । ३ । ६ । १० । ११ स्थानोंपर शुभ है । और सूर्यसे अष्ट (८), स्मर (७) इन स्थानोंसहित ३ । ६ १० । ११ स्थानोंपर अर्थात् ८ । ७ । ३ । ६ । १० । ११ स्थानोंपर शुभ है । और सूर्यसुत (शनैश्चर) से त्रि (३), षट् (६), आय (११), सुत (५) इन स्थानोंपर चन्द्रमा शुभ है ॥ ३ ॥

ज्ञात्केन्द्रत्रिसुतायाष्टगो गुरोर्व्ययायमृत्युकेंद्रेषु ॥ त्रिचतुःसुतनवदशमसप्तायगश्चंद्रमाः शुक्रात् ॥ ४ ॥

और ज्ञ (बुध) से केंद्र १ । ४ । ७ । १०, त्रि (३), सुत (५) आय (११), अष्ट (८) इन स्थानोंपर चंद्रमा शुभ होवे है । और गुरु (बृहस्पति) से व्यय (१२), आय (११), मत्यु (८), केंद्र १ । ४ । ७ । १० इन स्थानोंपर शुभ है । और शुक्रसे त्रि (३), चतुः (४), सुत (५), नव (९), दशम (१०), सप्त (७), आय (११) इन स्थानोंपर चन्द्रमा शुभ होवे है ॥ ४ ॥

भौमाष्टकवर्गः।

भौमः स्वादायस्वाष्टकेंद्रगरुय्यायषट्सुतेषु बुधात्॥
जीवाद्दशायशत्रुर्व्ययेष्विनादुपचयसुतेषु॥ ५ ॥

इसके अनंतर मंगलका रेखाष्टकवर्ग कहते हैं–भौम (मंगल) अपने स्थानसे आय (११), स्व (२), (अष्ट) ८, (केंद्र १। ४ । ७। १०) इन स्थानोंपर शुभ होवे हैं। और बुधसे त्रि (३), आय (११), षट् (६), सुत (५), इन स्थानोंपर शुभ है। और जीव (बृहस्पति) से दश (१०) आय (११), शत्रु (६) व्यय (१२) इन स्थानोंपर शुभ है। और इन (सूर्य) से उपचय ३। ६। १०। ११। सुत (५) इन स्थानोंपर मंगल शुभ है ॥५॥

उदयादुपचयतनुषु त्रिषडायेष्विंदुतः समोदशमः॥
भृगुतोंऽत्यषडष्टायेष्वसितात्केंद्रायनववसुषु॥ ६ ॥

उदयलग्नसे उपचय ३। ६ १०। ११, तनु (१) इन स्थानोंपर मंगल शुभ है। और इन्दु (चंद्रमा) से त्रि (३), षट् (६), आय (११) इन स्थानोंपर शुभ है और चंद्रमासे दशम (१०) स्थान सम है, अर्थात् चन्द्रमासे १० स्थानपर मंगल मध्यम है। और भृगु (शुक्र) से अंत्य (१२), षट् (६), अष्ट (८), आय (११) इन स्थानोंपर शुभ है। और असित (शनैश्चर) से केंद्र १ । ४। ७। १०, आय (११), नव (९), वसु (८) इन स्थानोंपर मंगल शुभ है ॥ ६ ॥

बुधाष्टकवर्गः।

सौम्योंऽत्यषण्णवायात्मजेष्विनात् स्वा-
त्रितनुदशयुतेषु॥ चन्द्राद्विरिपुदशाया-
ष्टसुखगतः सादिषु विलग्नात्॥ ७ ॥

इसके अनन्तर बुधका रेखाष्टकवर्ग कहते हैं:—सौम्य (बुध) इन (सूर्य) से अन्त्य(१२), षट् (६) नव, (९), आय (११) आत्मज (५) इन स्थानोंपर शुभ है। और बुध अपने स्थानसे त्रि (३), तनु (१), दश (१०) इन स्थानयुक्त जो अन्त्य (१२) षट् (६), नव (९), आय (११), आत्मज (५) अर्थात् बुध अपने राशिसे ३ । १। १० । १२ । ६ । ९ । ११ । ५ शुभ है। और चन्द्रमासे द्वि (२), रिपु (६), दश (१०), आय (११), अष्ट (८), सुख (४) इन स्थानोंपर शुभ है। और लग्न से आदि (१) स्थान सहित जो द्वि (२), रिपु (६), दश (१०) आय (११), अष्ट (८), सुख (४) इन स्थानोंपर अर्थात् लग्नसे १ । २ । ६ । १० । ११ । ८ । ४ इन स्थानोंपर बुध शुभ है ॥ ७ ॥

प्रथमसुखायद्विनिधनधर्मेषु सितात् त्रिधीसमेतेषु ॥
साशास्मरेषु सौरारयोर्व्ययायारिपुवसुषु गुरोः ॥ ८ ॥

और सित (शुक्र) से त्रि (३), धी (५) इन स्थानसहित जो प्रथम (१), सुख (४), आय (११), द्वि (२), निधन (८), धर्म (९) इन स्थानोंपर अर्थात् ३ । ५ । १ । ४ । ११ । २ । ८ । ९ इन स्थानोंपर बुध शुभ है। सौर(शनैश्चर)और मंगल इन ग्रहोंसे आशा (१०), स्मर (७) इन स्थानसहित जो पूर्वस्थान३।५।१।४। ११ । २।८ । ९ अर्थात् १० । ७ । ३ । ५ । १ । ४ । ११ । २ । ८ । ९ इन स्थानोंपर शुभ है। और गुरु (बृहस्पति) से व्यय (१२), आय (११), रिपु (६), वसु (८) इन स्थानोंपर शुभ है ॥ ८ ॥

गुरोरष्टकवर्गः ।

जीवो भौमाद्व्ययाष्टैकद्रगोऽर्कात्सधर्मसहजेषु ॥
स्वात् सत्रिकेषु शुक्रान्नवदशलाभस्वधीरिपुषु ॥ ९ ॥

इसके अनन्तर बृहस्पतिका रेखाष्टकवर्ग कहते हैं:-जीव (बृहस्पति) भौम (मंगल) से द्वि (२), आय (११), अष्ट (८), केंद्र १।४। ७।१० इन स्थानोंपर शुभ है। और अर्क (सूर्य) से धर्म (९), सहज (३) इन स्थानोंसहित पूर्व स्थानोंपर अर्थात् २।११।८।१।४।७।१०।९। ३। इन स्थानोंपर शुभ है। और बृहस्पति अपने स्थानसे त्रिक् (३) इन स्थानसहित पूर्व स्थानोंपर अर्थात् २।११।८।१।४।७।१०।३ इन स्थानोंपर शुभ है। और शुक्रसे नव (९), दश (१०), लाभ (११), स्व (२), धी (५), रिपु (६) इन स्थानोंपर बृहस्पति शुभ है॥ ९॥

शशिनः स्मरत्रिकोणार्थलाभगस्त्रिरिपु-
धीव्ययेषु यमात्॥ नवदिक्सुखाद्यधी-
स्वायशत्रुषु ज्ञात्सकामगो लग्नात्॥ १०॥

जीव (बृहस्पति) शशी(चन्द्रमा) से स्मर (७),त्रिकोण(९।५), अर्थ (२),लाभ (११) इन स्थानोंपर शुभ है। और शनिते ३।६।५ ।१२ और ज्ञ (बुध) से नव (९), (१०), सुख (४), आद्य(१), धी (५), स्व (२), आय (११), शत्रु (६) इन स्थानोंपर शुभ है। और लग्नसे काम (७) इन स्थानसहित पूर्वके स्थानोंपर अर्थात् ९। १०।४।१।५।२। ११ । ६ । ७ । इन स्थानोंपर बृहस्पति शुभ है ॥१०॥

शुक्राष्टकवर्गः।

शुक्रो लग्नादासुतनवाष्टलाभेषु सव्ययश्चन्द्रात्॥
स्वात्सदिगसित्रिसुखात्मजाष्टदिग्धर्मलाभेषु॥ ११॥

इसके अनन्तर शुक्रका रेखाष्टकवर्ग कहते हैं:-शुक्र लग्नसे आसुत अर्थात् पंचमभावपर्यन्त १ । २ । ३ । ४ । ५, नव (९) अष्ट (८), लाभ (११) इन स्थानोंपर शुभ है। और चन्द्रमासे व्यय (१२) इस स्थानसहित पूर्व स्थानोंपर शुभ है अर्थात् १ ।

२ । ३ । ४ । ५ । ९ । ८ । ११ । १२ इन स्थानोंपर शुभ है और शुक्र अपने स्थानसे दिक् (१०) इस स्थानसहित पूर्व स्थानोंपर अर्थात् १ । २ । ३ । ४ । ५ । ९ । ८ । ११ । १२ । १० इन स्थानोंपर शुभ है । और असित (शनैश्चर) से त्रि (३), सुख (४), आत्मज (५), अष्ट (८), दिक् (१०), धर्म (९), लाभ (११) इन स्थानोंपर शुक्र शुभ है ॥ ११ ॥

वस्वंत्यायेष्वर्कान्नवदिग्लाभाष्टधीस्थितो जीवात् ॥
ज्ञात्रिसुतनवायारिष्वायसुतापोक्लीमेषु कुजात् ॥ १२ ॥

और अर्क (सूर्य) से वसु (८), अन्त्य (१२), आय (११) इन स्थानोंपर शुक्र शुभ है । और जीव (वृहस्पति) से नव (९), दिक् (१०), लाभ (११), अष्ट (८), धी (५) इन स्थानोंपर शुक्र शुभ है । और ज्ञ (बुध) से त्रि (३), सुत (५), नव (९), आय (११), अरि (६) इन स्थानोंपर शुभ होवे है । और कुज (मंगल) से आय (११), सुत (५), आपोक्लिम ३ । ५ । ६ । ९ । १२ इन स्थानोंपर शुक्र शुभ होवे है ॥ १२ ॥

शनेरष्टकवर्गः ।

स्वात्सौरिस्त्रिसुतायारिगः कुजादंत्यकर्मसहितेषु ॥
स्वायाष्टकेंद्रगोऽर्काच्छुक्रात्षष्ठांत्यलाभेषु ॥ १३ ॥

इसके अनन्तर शनैश्चरका रेखाष्टकवर्ग कहते हैं:—सौरि (शनैश्चर) अपने स्थानसे त्रि (३), सुत (५), आय (११), अरि (६) इन स्थानोंपर शुभ होवे है । और कुज (मंगल) से अंत्य (१२), कर्म (१०) इन स्थानोंसहित पूर्वस्थानोंपर अर्थात् १२ । १० । ३ । ५ । ११ । ६ इन स्थानोंपर शुभ है । अर्क (सूर्य) से स्व (२), आय (११), अष्ट (८), केंद्र १ । ४ । ७ । १० इन स्थानोंपर शुभ है और शुक्रसे षष्ठ (६), अंत्य (१२), लाभ (११) इन स्थानोंपर शनैश्चर शुभ है ॥ १३ ॥

त्रिषडायगः शशांकादुदयात्ससुखाद्यकर्मगोऽथ गुरोः ॥
सुतषड्व्ययायगो ज्ञाद्व्ययायरिपुदिङ्नवाष्टस्थः ॥१४॥

शशांक (चन्द्रमा) से त्रि (३), षट् (६), आय (११) इन स्थानोंपर शनैश्चर शुभ है। और उदयलग्नसे सुख (४), आद्य (१), कर्म (१०) इन स्थानोंसहित पूर्व स्थानोंपर अर्थात् ४। १। १०। ३। ६। ११ इन स्थानोंपर शुभ है। और गुरु (बृहस्पति) से सुत (५) षट् (६), व्यय (१२), आय (११) इन स्थानोंपर शुभ है। और ज्ञ (बुध) से व्यय (१२),आय(११),रिपु(६),दिक्(१०) नव (९), अष्ट (८) इन स्थानोंपर शनैश्चर शुभ है ॥ १४ ॥

अष्टवर्गफलम् ।

स्थानेष्वेतेषु शुभाः शेषेष्वहिता भवंति नैष्टानाम् ॥
अशुभशुभविशेषफलं ग्रहाः प्रयच्छंति चारगताः ॥१५॥

इन स्थानोंके विषे स्थित ग्रह शुभ है। और इनसे जो शेष नष्ट स्थान हैं तिनपर भये ग्रह अहित (अशुभ) होवे हैं, तिनमें भी चार-गतिमें स्थित भये ग्रह अशुभ और शुभके मध्यमें विशेष फलको देते हैं। भाव यह है कि पूर्व कहे स्थानोंपर ग्रह शुभ होवे हैं। इनसे शेष जो स्थान हैं उनपर स्थित भये ग्रह अशुभ होवे हैं। तिसमें भी शुभ अशुभमें विशेषका अन्तर कर जो शेष रहे उसके आधीन शुभ अशुभ फल कहे क्योंकि उस शुभ अशुभ फलको ग्रह राशि राशिपर विचर-नेसे सिद्ध करते हैं। जो ग्रहोंके शुभ स्थान हैं वह बिन्दुकरके लिखे और जो अशुभ स्थान हैं उनको रेखा करके लिखे। फिर तिन शुभ अशुभमें विशेष करके जो अधिक हों तिसका फल जानना। और जो शुभ अशुभ दोनों बराबर हों तौ सम फल जाने। और जिसमें आठ बिन्दु हों उसका पूर्ण शुभ फल जाने और जिसमें छः बिन्दु हों उसका

चतुर्थ भाग हीन शुभ फल जाने । और जिसमें चार बिन्दु हों उसका आधा शुभ फल जाने। और जिसमें दो बिन्दु हों उसका एक चौथाई शुभ फल जाने । और जिसमें बिन्दु अधिक हों उसका अधिक शुभ फल होता है और जिसमें रेखा अधिक हों उसका अधिक अशुभ फल होता है ॥ १५ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमङ्गलसेनात्मजकाशिरामविरचित-भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अथ दशमोऽध्यायः ।

चंद्रयोगप्रकरणम् ।

रविवर्ज्यं द्वादशगैरनफा चंद्राद् द्वितीयगैः सुनफा ॥
उभयस्थितैर्दुरुधरा केमद्रुमसंज्ञको योऽन्यः ॥ १ ॥

इसके अनन्तर प्रकीर्णाध्याय निरूपण किया जाता है:—चन्द्रमासे रवि (सूर्य) को त्याग बारहवें भावमें बैठे भये ग्रहोंकर अनफा नाम योग होवे है । अर्थात् चन्द्रमासे बारहवें स्थानपर सूर्यके विना और कोई ग्रह होवे तो अनफा योग होवे है । और चन्द्रमासे सूर्यको त्यागकर द्वितीय भावमें स्थित भये ग्रहोंकर सुनफा नाम योग होवे है । अर्थात् चन्द्रमासे दूसरे स्थानमें सूर्यके विना कोई ग्रह हो तो सुनफा योग होवे है । और चन्द्रमासे सूर्यको त्यागकर उभय अर्थात् दोनों बारहवें और द्वितीय स्थानमें स्थित भये ग्रहोंकर दुरुधरा योग होवे है। भाव है कि चन्द्रमासे बारहवें तथा दूसरे स्थानमें सूर्यके विना और ग्रह होवे तो दुरुधरा योग होवे है । यदि इन कहे भये स्थानमें सूर्य हो और

---

१ क्लेशोऽर्थहानिर्व्यसनं समत्वं शश्वत्सुखं नित्यधनागमश्च । सम्पत्प्रवृद्धिर्विपुलामलश्रीः प्रत्येकरेखाफलमामनन्ति ॥

कोई ग्रह होवे नहीं तो यह योग नहीं होवे है। और इन कहे भये योगोंसे जो अन्य विपरीत हो तो केमद्रुम योग होवे है ॥ १ ॥

चंद्रयोगफलम्।

सच्छीलं विषयसुखान्वितं प्रभुं ख्यातियुक्तमनफायाम्॥
सुनफायां धीधनकीर्तियुक्तमात्मार्जितैश्वर्यम् ॥ २ ॥

अनफायोगके विषे उत्पन्न भये पुरुषको सुन्दर शील तथा विषय-सुखयुक्त प्रभु (सामर्थ्यवान्) और कीर्तियुक्त जाने। और सुन-फायोगके विषे धी (बुद्धि) धन कीर्तियुक्त और स्वयं सिद्ध किये भये ऐश्वर्यवाला उत्पन्न भया पुरुष जाने ॥ २ ॥

बहुभृत्यकुटुंबारंभचित्तमुद्विग्नमपि च दौर्धरिके ॥
भृतकं दुःखितमधनंजातं केमद्रुमे विद्यात् ॥ ३ ॥

और दुरुधरायोगके विषे उत्पन्न भये प्राणीको बहुतसे भृत्य नौकर दास दासी और बहुतसे कुटुम्बवाला और कार्यके आर-म्भमें चित्त करनेवाला तथा उद्विग्नचित्त जाने। और केमद्रुमयोगके विषे भृतक अर्थात् दासकर्म करनेवाला दुःखी और निर्धन उत्पन्न भये प्राणीको जाने ॥ ३ ॥

योगकर्तृग्रहफलम्।

भौमश्चौरश्चंडो महाधनो ज्ञानवान् बुधो निपुणः ॥
ऋद्धः शुक्रः सुखितो गुरुर्गुणाढ्यो नृपतिपूज्यः ॥४॥

यदि अनफा, सुनफा, दुरुधरा, योगोंमें किसी योगका करने वाला भौम (मंगल) होवे तो उत्पन्न भया प्राणी चौर और तीक्ष्ण होवे। और बुध होवे तो महाधनी तथा ज्ञानी और चतुर होवे। और शुक्र होवे तो ऋद्ध, ईश्वर (सामर्थ्यमान) होवे। और गुरु (बृहस्पति) होवे तौ गुणयुक्त और राजाओंका पूज्य होवे ॥ ४ ॥

बह्वारंभः सौरिर्बहुभृत्यः पूजितो गुणैर्वृद्धः ॥
एषां गुणैः समगुणा ज्ञेया योगोद्भवाःपुरुषाः ॥८॥

और जो सौरि (शनैश्चर) होवे तौ बहुतसे कार्योंका आरम्भ करनेवाला, बहुतसे भृत्य दास दासियोंवाला, पूजित और गुणोंकर वृद्ध होवे । अनफा, सुनफा, दुरुधरा योगोंके विषे उत्पन्न भये पुरुष इन ग्रहोंके गुणोंकर समान गुण जानने ॥ ८ ॥

सूर्यप्रकरणम् ।

सूर्याद्वितीयमृक्षं वेशिस्थानं प्रकीर्तितं यवनैः ॥
तच्चेष्टग्रहयुक्तं जन्मनि यात्रासु चेष्टफलम् ॥ १ ॥

सूर्यसे द्वितीय राशि यवनोंने वेशिस्थान कहा है । अर्थात् जन्मकालमें जिस राशिपर सूर्य बैठा हो उसके द्वितीय राशिकी वेशिसंज्ञा है । जो जन्मकालके विषे वेशिराशि पर शुभग्रह हो तौ शुभ होवे है और वही वेशिराशि यात्रामें लग्न होवे तौ कल्याणदायक है ॥ १ ॥

द्विग्रहयोगप्रकरणम् ।

यंत्रज्ञं पापरतं निपुणं क्रूरं च शस्त्रवृत्तिं च ॥
धातुज्ञं च क्रमशश्चंद्रादिभिरन्वितः सूर्यः ॥ १ ॥

इसके अनन्तर द्विग्रहयोग कहते हैं:-सूर्य क्रमसे चन्द्रमादिक ग्रहोंकर युक्त होवे तो उत्पन्न भये पुरुषको यन्त्रोंका जाननेवाला और पापयुक्त तथा चतुर तथा क्रूरस्वभाव तथा शस्त्रवृत्तिवाला तथा धातुके जाननेवाला करे । अर्थात् सूर्य चन्द्रमायुक्त हो तो उत्पन्न भया पुरुष यन्त्रोंके जाननेवाला हो और सूर्य मंगल युक्त हो तो पापी और बुधयुक्त हो तौ चतुर, बृहस्पतियुक्त हो तो क्रूरस्वभाव, शुक्रयुक्त हो तो शस्त्रवृत्तिवाला और शनैश्चरयुक्त हो तौ सुवर्णादिक धातुओंकी परीक्षा करनेवाला हो ॥ १ ॥

चन्द्रेऽगारकपूर्वैः कूटज्ञं प्रसृतं कुलाभ्यधिकम् ॥
वस्त्रव्यवहारज्ञं क्रमेण पौनर्भवं चापि ॥ २ ॥

और चन्द्रमा क्रमसे अंगारपूर्वक अर्थात् मंगलादिक ग्रहोंसे युक्त हो तो उत्पन्न भये पुरुषको कूटज्ञ अर्थात् कुलका मंगल करनेवाला और प्रसृत अर्थात् कहनेमें चतुर (प्रिय बोलनेवाला) और कुलमें अधिक और वस्त्रोंका व्यवहार जाननेवाला और पुनर्भूपुत्र जाने। अर्थात् चन्द्रमा मंगलयुक्त हो तो उत्पन्न भया पुरुष कुलका मंगलकारी हो, और बुधयुक्त हो तो कहनेमें चतुर प्रिय बोलनेवाला, और बृहस्पतियुक्त हो तो कुलमें अधिक, शुक्रयुक्त हो तो वस्त्रोंके व्यवहारमें चतुर, शनैश्चरयुक्त हो तो पुनर्भूपुत्र हो ॥ २ ॥

मल्लो रक्षकपरदारसक्तो दुःखान्वितः कुजो ज्ञाद्यैः ॥
ज्ञो जीवाद्यैर्गीतज्ञं वाग्मी महेन्द्रजालज्ञम् ॥ ३ ॥

कुज (मंगल) क्रमसे ज्ञ (बुध) आदिक ग्रहोंसे युक्त हो तो उत्पन्न भया पुरुष मल्ल तथा रक्षा करनेवाला तथा पराई स्त्रीमें रत तथा दुःखयुक्त हो। अर्थात् मंगल बुधयुक्त हो तो उत्पन्न भया पुरुष मल्ल हो और बृहस्पतियुक्त हो तो रक्षक, शुक्रयुक्त हो तो पराई स्त्रीमें रत। और शनैश्चरयुक्त मंगल हो तो दुःखी हो। और ज्ञ (बुध) क्रममे जीव (बृहस्पति) आदिक ग्रहोंसे युक्त हो तो गीतके जाननेवाला तथा वाग्मी (पण्डित) तथा इंद्रजालके जाननेवाला हो अर्थात् बुध बृहस्पतियुक्त हो तो उत्पन्न भया पुरुष गीतके जाननेवाला हो। और शुक्रके साथ हो तो पण्डित, शनैश्चरके साथ हो तो इन्द्रजालके जाननेवाला हो ॥ ३ ॥

त्रिग्रहयोगप्रकरणम्।

जीवः सितेन बहुगुणमसितेन समन्वितोऽत्र घटकारम्॥
स्त्रीधनमंदेन सितस्त्रिभिरप्येवं फलानि वदेत् ॥ १ ॥

जीव (बृहस्पति) सित (शुक्र) से युक्त हो तो उत्पन्न भये पुरुषको बहुत गुणवाला करे और असित (शनैश्चर) से युक्त हो तो उत्पन्न भये पुरुषको कुम्भकार करे और मन्द (शनैश्चर) से सित (शुक्र) युक्त हो तो उत्पन्न भये पुरुषको स्त्रीधन कहे । अर्थात् वह पुरुष स्त्रीसे धन पावे और तीन ग्रहोंके योग करके भी इसी प्रकार फल कहे । जैसे सूर्य, चन्द्रमा, मंगल एक राशिपर युक्त हों तो चन्द्रमा और सूर्यके योगका जो फल कहा है वह और सूर्य, मंगलके योगका जो फल है वह, और चन्द्रमा, मंगलके योगका जो फल है वह ये तीनों फल कहे । इस प्रकार त्रिग्रहयोगका फल कहना चाहिये ॥ १ ॥

चतुर्ग्रहयोगप्रकरणम् ।

चतुरादिभिरेकस्थैः प्रव्रज्यां स्वां ग्रहः करोति बली ॥
बहुवीर्यैस्तावन्त्यः प्रथमा वीर्याधिकस्यैव ॥ १ ॥

इसके अनन्तर प्रव्रज्याध्याय निरूपण किया जाता है:-चार आदिक ग्रह एक स्थानमें स्थित हों तो बली ग्रह अपनी प्रव्रज्याको करता है । और यदि बहुत ग्रह बहुवीर्य हों तो उतनी ही प्रव्रज्या होवे है जितने कि बली ग्रह हों । परन्तु प्रथम प्रव्रज्या अधिक वीर्यवाले ग्रहकी होवे है । भाव यह है कि जिस पुरुषके जन्मकालमें चार ग्रह एक स्थानमें हों तो वह पुरुष प्रव्रज्याको प्राप्त होवे है । परन्तु जो ग्रह उन एक राशिपर स्थित भये ग्रहोंमें बली हो उसकी प्रव्रज्या होवे है । और यदि बहुत ग्रह बली होवें तौ उतनी ही प्रव्रज्या होवे जितने कि ग्रह बली हैं । परन्तु उन ग्रहोंमें भी प्रथम प्रव्रज्या अधिक बली ग्रहोंकी होवे है।तदनन्तर ग्रहोंका बल विचार कर उत्तरोत्तर ग्रहोंकी प्रव्रज्या कहे । और यदि उन एक स्थानमें स्थित भये चार आदिक ग्रहोंमें कोई ग्रह बली न होवे तो उत्पन्न भये पुरुषको प्रव्रज्या कहे ॥ १ ॥

तापसवृद्धश्रावकरक्तपटाजीविभिक्षुचरकाणाम् ॥
निर्ग्रंथानां चार्कात् पराजितैः प्रच्युतिर्बलिभिः ॥ २॥
"वानप्रस्थोऽथ कापाली बौद्धः स्यादेकदंडिनः ॥
त्रिदंडी योगिनो नग्नः प्रव्रज्यार्कादितःक्रमात् ॥३॥"

सूर्यादिक ग्रहोंसे लेकर क्रमपूर्वक तापस (वानप्रस्थ) तथा वृद्धश्रावक (कापालिक) तथा रक्तपट (बौद्ध) तथा आजीवी (एकदण्डी) तथा भिक्षु (त्रिदण्डी) तथा चरक (चक्रधर योगी) तथा निर्ग्रन्थ (नग्न) इन नामोंकी प्रव्रज्या कहनी। अर्थात् एक स्थानमें स्थित भये चार आदिक ग्रहोंमें सूर्य बली हो तो उत्पन्न भये पुरुषकी तापस (वानप्रस्थ) प्रव्रज्या हो, चन्द्रमा बली होवे तौ वृद्धश्रावक (कापालिक) प्रव्रज्या हो, और मंगल बली होवै तो रक्तपट (बौद्ध) प्रव्रज्या हो बुध बली हो तौ आजीवी (एकदण्डी)प्रव्रज्या हो, और बृहस्पति बली हो तो भिक्षु (त्रिदण्डी)प्रव्रज्या हो,और शुक्र बली हो तौ चरक (चक्रधर योगी (प्रव्रज्या, और शनैश्चर बली हो तो निर्ग्रन्थ (नग्न) प्रव्रज्या हो, और यदि बहुत ग्रह बली हों तौ ग्रहोंकी कही भई बहुत ही प्रव्रज्या हों। और सूर्यसे लेकर क्रमपूर्वक पराजित बली ग्रहोंकी प्रव्रज्याकी प्रच्युति (भ्रंशता) कहे। भाव यह है कि एक राशिपर स्थित भये चार आदिक ग्रहोंमें जो ग्रह बली हो और वह जो युद्धमें और ग्रहकर हारा हो तो उस ग्रहकी कही भई प्रव्रज्याको प्राप्त होकर वह पुरुष उसको त्याग देता है। और जो बहुतसे बली ग्रह और ग्रहकर हारे होंतो बहुतसी ग्रहोंकी कही भई प्रव्रज्याको प्राप्त होकर वह पुरुष फिर उन सबोंको त्याग देता है ॥ २ ॥ ३ ॥

प्रवज्याभंगलक्षणम्।

दिनकरलुप्तमयूखैरदीक्षिता भक्तिवादिनस्तेषाम्॥
याचितदीक्षाबलिभिः पराजितैरन्यदृष्टैर्वा ॥४॥

दिनकर अर्थात् सूर्यकर लोप होगये हैं किरण जिनके ऐसे अस्तके प्रव्रज्याकारक बली ग्रह हो तो प्रव्रज्या प्राप्त भये वह पुरुष अदीक्षित और अभक्तिवादी हों। भाव यह है कि जितने एक स्थानमें स्थित भये चार आदि ग्रह बली हों उतनेही प्रव्रज्यादायक ग्रह होवे हैं। और तिसमें भी बली ग्रहोंके बीचमें जितने बली ग्रह अस्त हों उतनेही ग्रह अपनी अपनी प्रव्रज्याको नहीं देवे हैं। और जो प्रव्रज्याकारक बली ग्रह युद्धमें किसी ग्रहसे हारे हों और किसी ग्रहने देखे हो तो पुरुष याचितदीक्षा हो। भाव यह है कि एक स्थानमें स्थित भये चार आदिक ग्रहोंमें जो ग्रह बली होकर युद्धमें हारा हो और किसी ग्रहने देखा हो तो प्रव्रज्याको चाहनेवाला भी नहीं प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

प्रव्रज्यालक्षणज्ञानम् ।

चतुर्ग्रहैरेकगतैश्च संस्थैर्धीधर्मदुश्चिक्यतनुस्थितैर्वा ॥
दासीषु जातः क्षितिपालतुल्यो भवेन्नरो भूपतिरंतकोशी५

जन्मकालमें चार ग्रह एक राशिपर स्थित होकर धी (पंचम), धर्म (नवम), दुश्चिक्य (तृतीय), तनु (लग्न) इन भावोंपर स्थित हो तो दासियोंके विषे उत्पन्न भया पुरुष पृथिवीपाल राजाके समान तथा स्वयं पृथवीपति अति खजानेवाला हो ॥ ५ ॥

राशिशीललक्षणम् ।

अस्थिरविभूतिमित्रं चलमटनं स्खलितनियममपि च-
रभे ॥ स्थिरभे तद्विपरीतं क्षमान्वितं दीर्घसूत्रं च ॥१॥

इसके अनन्तर राशिशीलप्रकरण कहते हैं:--यदि चर मेष, कर्क, तुला, मकर राशिपर चन्द्रमा बैठा हो तौ उत्पन्न भये पुरुषको चलायमान ऐश्वर्य और मित्रोंवाला, परिभ्रमणशील और चलायमान नियम व्रतवाला करे, और यदि स्थिरवृष, सिंह,

वृश्चिक, कुम्भ राशियोंपर चन्द्रमा हो तौ उत्पन्न भये प्राणीको तिससे विपरीत अर्थात् स्थिरविभूति, स्थिर मित्रोंवाला और सदाही एक जगह स्थित रहनेवाला और निश्चल व्रत नियमवाला और क्षमायुक्त बहुत कालपर्यन्त कार्यके अनुष्ठानवाला करे ॥ १ ॥

द्विशरीरे त्यागयुतं कृतज्ञमुत्साहिते विविधचेष्टम् ॥
ग्राम्यारण्यजलोद्भवराशिषु जाता भवंति तच्छीलाः ॥२॥

और द्विशरीर अर्थात् द्विस्वभाव राशि मिथुन, कन्या, धनु, मीन राशियोंपर चन्द्रमा हो तौ त्यागयुक्त अर्थात् दानी, कृतज्ञ (करेका जाननेवाला), उत्साही (अनेक क्रियाओंका करनेवाला) उत्पन्न भये पुरुषको करे। और ग्राम्य अर्थात् ग्रामवासी, आरण्य अर्थात् वनवासी औरसे उत्पत्ति जिनकी ऐसे राशियोंके विषे उत्पन्न भये प्राणी तत्स्वभावही होते हैं। भाव यह है कि ग्रामवासी राशि मिथुन कन्या, तुला, कुम्भ और धनुका पूर्वार्द्ध है; यदि यह राशि जन्मसमय हों तौ ग्राममें प्रीति करनेवाले उत्पन्न भये प्राणी हों। और वनवासी मेष, सिंह, वृष और धनका परार्द्ध और मकरका पूर्वार्द्ध, यदि यह राशि जन्मसमय होवे तौ वनमें प्रीति करनेवाले प्राणी हों। और जलवासी कर्क, मीन और मकर का परार्द्ध है, यदि यह राशि जन्मसमय हों तौ नलमें प्रीति करनेवाले पुरुष होवें। और यदि वृश्चिक राशि जन्मसमय हो तौ ग्राम और वनमें प्रीति करनेवाले पुरुष हों ॥ २ ॥

दृष्टिफलम्

क्षेत्राधिपसंदृष्टे शशिनि नृपस्तत्सुहृद्भिरपि धनवान् ॥
द्रेष्काणांशकपैर्वा प्रायः सौम्यैः शुभं नान्यैः ॥ ३ ॥

इसके अनन्तर दृष्टिफल कहते हैं:-जन्मसमय यदि शशी (चन्द्रमा) स्थान स्वामीने देखा हो तो उत्पन्न भया पुरुष राजा होवे, और

उस स्थानके स्वामीके मित्रने देखा हो तो धनवान् है और द्रेष्काण और अंशक (नवांशक) और द्वादशांशक और त्रिंशांशकोंके स्वामियोंने चन्द्रमा देखा हो तौ भी धनी हो । भाव यह है कि जिस द्रेष्काण वा नवांशक वा द्वादशांशक वा त्रिंशांशकपर चन्द्रमा बैठा हो और उस द्रेष्काण वा नवांशक वा द्वादशांशक वा त्रिंशांशकके स्वामीने देखा हो तो धनी हो । और चन्द्रमाके राशि वा द्रेष्काण वा नवांशक वा द्वादशांशक वा त्रिंशांशकके स्वामी शुभ ग्रह हों और तिन्होंने चन्द्रमा देखा हो तो बहुधा शुभ फल हों, और जो चन्द्रमा अन्य शत्रुग्रहोंने देखा हो तो अशुभ फल करे । अर्थात् जिस राशिपर चन्द्रमा बैठा हो वा जिस द्रेष्काण वा नवांशक, द्वादशांशक वा त्रिंशांशकपर चन्द्रमा बैठा हो और उस राशि वा द्रेष्काण वा नवांशक, द्वादशांशक वा त्रिंशांशकका स्वामी चन्द्रमाका शत्रु हो तो शुभ फल नहीं होवे और चन्द्रमापर स्वामीकी दृष्टिका शुभ फल निष्फल हो ॥ ३ ॥

भावप्रकरणम् ।

पुष्णंति शुभा भावा मूर्त्यादीन् घ्नन्ति संस्थिताः पापाः॥
सौम्याः षष्ठेऽरिघ्नाः सर्वे नेष्टा व्ययाष्टमगाः ॥ ४ ॥

इसके अनन्तर भावप्रकरण कहते हैं:-लग्नसे लेकर तनुधनादिक भावोंमें स्थित भये शुभ ग्रह मूर्त्यादिक भावोंको पुष्ट करते हैं, और पापग्रह भावोंकी हानि करते हैं । भाव यह है कि तन्वादिक द्वादश भावोंमें से जिस भावपर पापग्रह बैठा हो उस भावकी वृद्धि होवे है, जिस भाव पर पापग्रह बैठा हो उस भावकी हानि होवे है परन्तु छठे स्थानपर बैठे भये शुभ ग्रह वैरीका नाश करते हैं । और पापग्रह अवश्यही वैरी का नाश करते हैं । और व्यय (बारहवें) भाव और आठवें भावमें स्थित भये समस्त ग्रह नेष्ट हैं अर्थात् यदि बारहवें स्थानमें शुभ ग्रह वा पापग्रह बैठे हों तौ खर्चकी वृद्धि करते हैं, और यदि आठवें स्थानमें पाप-

ग्रह वा शुभ ग्रह हों तो मृत्युकी वृद्धि करते हैं,और यदि तृतीय भावमें शुभ ग्रह वा पापग्रह हों तो सहोदर (भाइयों) की वृद्धि करते हैं। यदि दशम भावमें शुभ ग्रह वा पापग्रह हों तो कर्मकी वृद्धि करते हैं, और लाभ (ग्यारहवें) भावपर शुभ ग्रह वा पापग्रह हों तो लाभकी वृद्धि करते हैं। और जो ग्रह जिस भावका स्वामी हो और वह उसी स्थानपर युक्त हो तो उस भावकी वृद्धि निश्चय ही करता है ॥ ४ ॥

चन्द्रे लग्नगते फलम् ।

कर्किवृषाजोपगते चंद्रे लग्ने धनी सुरूपश्च ॥
विकलांगजडदरिद्राः शेषेषु विशेषतः कृष्णे ॥ ५ ॥

जन्मसमय कर्क वा वृष वा अज (मेष) इन राशियोंपर प्राप्त होकर चंद्रमा लग्नमें बैठा हो तो उत्पन्न भया पुरुष धनी तथा रूपवान् हो, और यदि इनसे शेष राशियोंपर स्थित होकर कृष्णपक्षमें चंद्रमा लग्नमें बैठा हो तो विशेषकर उत्पन्न भये प्राणी विकल अंगवाले तथा जड (मूर्ख) और दरिद्री हों ॥ ५ ॥

सूर्ये लग्नगते फलम् ।

विकलेक्षणोऽर्कलग्ने तैमिरिकोऽजे स्वभे तु रात्र्यंधः ॥
बुद्बुददृष्टिः कर्किणि काणो व्ययगे शशांके वा॥ ६ ॥

जन्मसमय अर्क (सूर्य) लग्नमें बैठा हो तो उत्पन्न भया मनुष्य विकल नेत्रोंवाला हो और यदि सूर्य अज (मेष) राशिपर स्थित होकर लग्नमें बैठा हो तो तैमिरिक अर्थात् अन्धकारसे नष्टदृष्टिवाला हो; और यदि सूर्य अपने राशि सिंहपर स्थित होकर लग्नमें बैठा हो तो रात्रिमें अन्धदृष्टिवाला हो, और यदि सूर्य कर्क राशिपर स्थित होकर लग्नमें बैठा हो तो बुद्बुददृष्टिवाला अर्थात् पुष्पिताक्ष हो और यदि

सूर्य व्यय (बारहवें) भावमें बैठा हो तौ उत्पन्न भया पुरुष काणा हो, अथवा शशांक चंद्रमा व्यय (बारहवें) भावमें बैठा हो तो भी काणा हो, परन्तु जो सूर्य बारहवें भावमें बैठा हो तो दाहिने नेत्रकर काणा हो, और जो चंद्रमा (बारहवें) भावमें बैठा हो तो वाँये नेत्रकर काणा हो ॥ ६ ॥

भावशुभाशुभफलम् ।

इष्टं पादविवृद्ध्या मित्रस्वगृहत्रिकोणतुंगेषु ॥
रिपुभेऽल्पं फलमर्कोपगतस्य पापं शुभं नैव ॥ ७ ॥

मित्र तथा निजस्थान तथा त्रिकोण राशि तथा उच्च राशि इन स्थानोंके विषे क्रमसे पादवृद्धिकर ग्रह शुभ फल देते हैं; और शत्रुके राशिपर स्थित भये ग्रह थोडा शुभ फल देते हैं, और अर्क (सूर्य) के साथमें स्थित अर्थात् अस्तग्रह तथा नीचग्रहका पाप (अशुभ) फल होवे है, और शुभ किंचिन्मात्र भी नहीं होता । भाव यह है कि जो ग्रह मित्रके घरका हो उसका शुभ फल एक चौथाई होता है और जो ग्रह अपने घरका हो उसका शुभ फल आधा होता है; और जो ग्रह त्रिकोणराशिका हो तो उसका शुभ फल तीन भाग होता है; और जो ग्रह उच्चका हो उसका शुभ फल संपूर्ण होवे है; जो ग्रह शत्रुके घरका हो उसका शुभ फल एक चौथाईसे भी कम होता है, और जो ग्रह अस्तका वा नीचका हो उसका शुभ फल किंचिन्मात्रभी नहीं होता, और अशुभ फल संपूर्ण होवे है, और शत्रुक्षेत्रीका अशुभ फल तीन भाग होता है; और मित्रक्षेत्रीका अशुभ फल आधा होता है, और स्वक्षेत्रीका अशुभ फल चौथाई होता है, और त्रिकोणस्थ ग्रहका अशुभ फल एक चौथाईसे भी कम होवे है, और उच्चग्रहका अशुभ फल किंचिन्मात्र भी नहीं होवे है ॥ ७ ॥

मेषादिनवांशफलम् ।

तस्करभोक्तृविचक्षणधननृपतिनपुंसकाभयदरिद्राः ॥
खलपापोग्रोत्कृष्टा मेषादीनां नवांशभवाः ॥ ८ ॥

इसके अनन्तर आश्रयप्रकरण कहते हैं-तिसमें प्रथम नवांशकोंमें उत्पन्न भये प्राणीका स्वरूप कहते हैं। मेषादिक राशियोंके नवांशकोंमें उत्पन्न भये प्राणी क्रमसे चौर तथा भोगी तथा चतुर तथा धनी तथा राजा तथा नपुंसक तथा अभय (शूरवीर) तथा दरिद्री तथा दुष्ट तथा पापी तथा क्रूर तथा उत्कृष्ट होवे हैं। अर्थात् जन्मसमय मेषका नवांशक हो तो चौर, वृषका हो तो भोगी, मिथुनका हो तो चतुर, कर्कका हो तो धनी, सिंहका हो तो राजा, कन्याका हो तो नपुंसक, तुलाका हो तो शूरवीर, वृश्चिकका हो तो दरिद्री, धनुका हो तो दुष्ट, मकरका हो तो पापी, कुम्भका हो तो क्रूर, मीनका हो तो उत्कृष्ट बडा नामी होवे है ॥ १ ॥

स्वक्षेत्रगतग्रहफलम् ।

कुलतुल्यकुलाधिकबंधुमान्यधनिभोगिनृपसमनरेंद्राः ॥
स्वर्क्षगतैकविवृद्ध्या किंचिन्न्यूनाः सुहृद्गृहगैः ॥ २ ॥

अपनी राशियोंपर स्थित भये ग्रहोंके एक एक वृद्धि कर क्रमसे उत्पन्न भये प्राणी कुलके समान तथा कुलमें अधिक तथा भाइयोंमें श्रेष्ठ तथा धनी तथा भोगी तथा राजाके समान तथा स्वयं ही राजा होवे है। भाव यह है कि जन्मसमय एक ग्रह स्वक्षेत्री हो तो कुलके समान हो, दो ग्रह स्वक्षेत्री हों तो कुलमें अधिक हो, और तीन ग्रह स्वक्षेत्री हों तो भाइयोंमें श्रेष्ठ कहे, चार ग्रह स्वक्षेत्री हों तो धनी हो और पांच ग्रह स्वक्षेत्री हों तो भोगी हो, और छः ग्रह स्वक्षेत्री हों तो राजाके समान हो, और सात ग्रह स्वक्षेत्री हों तो स्वयं ही राजा हो और मित्रके घरमें स्थित भये ग्रहोंकर क्रमसे पूर्व कहे भये फलसे कुछ कम फल हो[1] ॥ २ ॥

१मित्रक्षेत्री ग्रहोंका फल और ग्रन्थसे स्पष्ट दिखाते हैं:,जो जन्मसमय एक ग्रह मित्रक्षेत्री हो तो उत्पन्न भया पुरुष पराये विभवका भोगनेवाला हो, और दो हों तो मित्रोंके विभवका भोगनेवाला हो,और तीन हों तो अपनी-

उच्चगतग्रहफलम् ।

त्रिप्रभृतिभिरुच्चस्थैर्नृपवंशभवा भवंति राजानः ॥
पंचादिभिरन्यकुलोद्भवाश्च तद्वत्रिकोणगतैः ॥ ३ ॥

जिनके जन्म समय तीन आदिक ग्रह उच्च राशिमें स्थित हैं वह राजाके वंशमें उत्पन्न होकर राजा ही होते हैं। अर्थात् जिसके तीन वा चार ग्रह उच्चके हों और वह उत्पन्न भया पुरुष राजवंशीय हो तो राजा होता है। और जिनके पांच आदिक ग्रह उच्च राशिमें बैठे हों वह अन्यवंशीय होकर भी राजा हो। अर्थात् जिसके पांच वा छः वा सात ग्रह उच्चके हों वह राजवंशके सिवाय और वंशमें उत्पन्न भया भी राजा हो। भाव यह है कि जिस राजवंशीयके तीन वा चार आदिक ग्रह उच्चके हों वह राजा हो और दो वा एक ग्रह उच्चका हो तो राजवंशीय पुरुष भी राजा न हो किन्तु धनी हो। और राजवंशके सिवाय जिस किसीके पांच छः सात ग्रह उच्चके हों वह अन्यवंशीय भी राजा हो। और एक वा दो वा तीन वा चार ग्रह उच्चके हों तो राजा नहीं हो किन्तु धनी हो। और जितने ग्रह उच्चके विशेष हों उतना ही अधिक धनी हो। और त्रिकोण राशिपर स्थित भये ग्रहोंकर भी उसी प्रकार कहे। भाव यह है कि जिस राजवंशीयके तीन वा चार आदिक ग्रह त्रिकोणके हों वह राजा हो। और एक वा दो हों तो राजवंशीय भी राजा न हो किन्तु धनी हो। और राजवंशके सिवाय जिस किसीके पांच वा छः आदिक ग्रह त्रिकोणमें स्थित हों तो वह अन्यवंशीय भी राजा हो और एक वा दो तीन वा चार ग्रह त्रिकोणके हों तो अन्यवंशीय भी राजा न हो किन्तु धनी हो। जितने त्रिकोणस्थ ग्रह विशेष हों उतना ही अधिक धनी हो ॥ ३ ॥

–जातिके विभवका भोगनेवाला हो, और चार हों तो भाइयोंके विभवका भोगनेवाला हो, पांच हों तो बहुतसे पुरुषोंका स्वामी हो, छः हों तो सेनापति हो, सात हों तो राजा हो। लिखा भी है "परविभवसुहृत्स्वबन्धुपोष्यागणपबलेशनृपाश्च मित्रभेषु"।

नीचगतग्रहफलम् ।

निर्धनदुःखितमूढव्याधितवंध्याभितप्तवधभाजः ॥
एकोत्तरपरिवृद्ध्या नीचगतैः शत्रुगृहगैर्वा ॥ ४ ॥

नीचराशिमें स्थित वा शत्रुके घरमें स्थित भये ग्रहोंकर एकोत्तरवृद्धि करके क्रमसे उत्पन्न भये पुरुष निर्धनी तथा दुःखित तथा मूढ (मूर्ख) तथा व्याधियुक्त तथा वन्ध्य तथा तपायमान तथा बन्धनभाक् होवे है अर्थात् जन्मसमय एक ग्रह नीचका वा अस्तका हो तो निर्धनी हो, और दो ग्रह नीचके वा अस्तके हों तो दुःखी हो, तीन ग्रह हों तौ मूर्ख, चार ग्रह हों तो व्याधियुक्त, पांच ग्रह हों तो वन्ध्य हो छः ग्रह हों तो तपायमान चित्त हो और सात ग्रह हों तो बन्धन सेवनेवाला पुरुष हो ॥ ४ ॥

राजयोगप्रकरणम् ।

एकोऽपि नृपतिजन्मप्रदो ग्रहः स्वोच्चगः सुहृद्दृष्टः ॥
बलिभिः केंद्रोपगतैस्त्रिप्रभृतिभिरवनिपालभवः ॥ १ ॥

इसके अनन्तर राजयोग कहते हैं:-जिसके जन्मसमय एक भी ग्रह अपने उच्चराशिपर बैठा हो और मित्रने देखा हो तो वह ग्रह राजाका जन्म देनेवाला है। और जिसके जन्मसमय जो तीनसे आदि लेकर बली ग्रह केन्द्रमें अर्थात् लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भावमें बैठे हों तो वह पुरुष राजाओंके वंशमें उत्पन्न भया राजा हो अर्थात् जिसके केन्द्रमें तीन ग्रह वा चार ग्रह बली होकर बैठे हों और वह पुरुष राजवंशीय हो तो राजा हो। और यहां आदिवाची प्रभृतिशब्दसे पञ्चादिक ग्रह नहीं ग्रहण करने चाहिये क्योंकि जिसके केन्द्रमें पांच ग्रह निर्बल होकर भी स्थित होवे हैं वह भी राजा होता है ॥ १ ॥

राजयोगान्तरम् ।

वर्गोत्तमगे चन्द्रे चतुराद्यैर्वीक्षिते विलग्ने वा ॥
नृपजन्म भवति राज्ये नृपयोगे बलयुतदशायाम् ॥२॥

और जिसके जन्मसमय चन्द्रमा वा लग्न वर्गोत्तम नवांशकमें स्थित हो और चार आदिक ग्रहोंने देखा हो तो उसका राजकारक जन्म होवे है, परन्तु राजकारक योग होनेपर भी बलवान् ग्रहकी दशामें राज्य होवे है । भाव यह है कि जिस राशिमें चन्द्रमा वा लग्न स्थित होकर और फिर उस राशिके नवांशकमें स्थित हो और चार वा पांच वा छः वा सात ग्रहोंने देखा हो तो अन्यवंशीय पुरुष राजा हो; परन्तु राज्यकी प्राप्तिका काल वह है जिस समय कि- राजयोगकारक ग्रहोंमेंसे बली ग्रहकी दशा होवे[1] ॥ २ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचित-
भाषाटीकायां प्रकीर्णाऽध्यायः ॥ १० ॥

अथैकादशोऽध्यायः ।

चरभवनादिषु सर्वैराश्रयजा रज्जुमुशलनलयोगाः ॥
ईर्ष्युर्मानी धनवान् क्रमेण कुलविश्रुताः सर्वे ॥ १ ॥

इसके अनन्तर नाभसयोग निरूपण किया जाता है:-नाभसयोग चार प्रकारके हैं, आश्रययोग, दलयोग, आकृतियोग, संख्यायोग । तिसमें आश्रययोग तीन प्रकारके हैं, और दलयोग दो प्रकारके हैं और आकृतियोग बीस प्रकारके हैं, और संख्यायोग सात प्रकारके हैं । इस प्रकार नाभसयोग बत्तीस प्रकारके हैं.

१ शशियोगसमानराशिसंशीलदर्शनानि भावाश्च । आश्रयराज्यप्रभवश्चाध्यायेऽस्मिन् क्रमेणोक्ताः । इस प्रकीर्णाध्यायमें चन्द्रयोग, अनफा, सुनफा, दुरुधरा, केमद्रुम और समागम, द्विग्रहयोग, प्रव्रज्यायोग और राशिशील-प्रकरण और दृष्टिप्रकरण और भावप्रकरण, आश्रयप्रकरण, राज्यप्रभव, राजयोग ये क्रमसे कहे हैं।

तिसमें पहिले तीनों नाभस योगोंको कहते हैं। चर आदिक राशियोंके विषे क्रमसे संपूर्ण ग्रहोंकर आश्रय योगसे उत्पन्न भये रज्जु, मुशल, नलनाम योग होते हैं। अर्थात् जो चर राशियोंपर समस्त ग्रह स्थित हों तौ रज्जु नाम योग होवै है। और जो स्थिर राशियोंपर समस्त ग्रह हो तौ मुशल नाम योग होवे है। और जो द्विस्वभाव राशियोंपर समस्त ग्रह स्थित हों तौ नल नाम योग होवे है। यदि रज्जु नाम योग हो तौ ईर्षा करनेवाला हो, और मुशल योग हो तो मान करनेवाला हो, और नल योग हो तो धनी हो, और यदि समस्त आश्रय योग हो तो उत्पन्न भये पुरुष कुलमें विख्यात होवे हैं ॥ १ ॥

केंद्रत्रयगैः पापैः शुभैर्दलाख्या बहिश्च माला च ॥
सर्पेऽतिदुःखितानां मालायां जन्म सुखिनां च ॥ २॥

इसके अनन्तर दलसंज्ञक योगोंको कहते हैं:--जिसके जन्मसमय पाप ग्रह सूर्य, मंगल, शनैश्चर अथवा शुभ ग्रह बुध, बृहस्पति, शुक्र जिस किसी तीन केंद्रोंमें स्थित हों तौ क्रमसे दल संज्ञक अहि (सर्प) और माला योग होते हैं। अर्थात् जो तीन पाप ग्रह जिस किसी तीन केंद्रोंमें स्थित हों तौ सर्पनाम योग होवे है। और जो तीन शुभ ग्रह जिस किसी तीन केंद्रोंमें स्थित हों तौ मालानाम योग होवे है। सर्पयोगमें अति दुःखी जनोंका जन्म होवे है, और माला-योगमें अतिसुखी जनोंका जन्म होवे है। इन दोनों योगोंमें चंद्रमा नहीं ग्रहण करना चाहिये ॥ २ ॥

आकृतियोगाः फलं च।

द्विरनंतरकेंद्रस्थैर्गदा विलग्नास्तसंस्थितैः शकटम् ॥
स्वचतुर्थयोर्विहंगाः शृंगाटकमुदयसुतनवगैः ॥ ३ ॥

इसके अनन्तर आकृतियोग कहते हैं: जो समस्त ग्रह अनन्तर दो केंद्रोंमें स्थित हों तौ गदायोग होवे है। अर्थात् केंद्रपति केंद्रमें समस्त ग्रह हों तौ गदायोग होवे है सो चार प्रकारसे होता है। जैसे लग्न, चतुर्थमें, एक और चतुर्थ सप्तममें दूसरा

और सप्तम दशममें तीसरा, और दशम और लग्नमें चौथा गदा योग होवे है। और जो समस्त ग्रह लग्न और अस्त (सप्तम भाव) में स्थित हों तौ शकटयोग होता है। और जो समस्त ग्रह ख (दशम) और चतुर्थ भावमें स्थित हों तौ विहंग योग होवे है। और जो समस्त ग्रह उदय (लग्न), सुत (पंचम), नवमस्थानमें स्थित हों तौ शृंगाटकयोग होवे है ॥ ३ ॥

हलाख्ययोगः फलं च ।

शृंगाटकतोऽन्यगतैर्हलमेतेषां क्रमात्फलोपनयः ॥
यज्वा शकटाजीवी दूतश्चिरसौख्यभाक्कृषिकृत् ॥ ४ ॥

और शृंगाटकयोगकारक स्थानोंसे भिन्न-स्थानोंपर स्थित होकर समस्त ग्रह परस्पर नवम, पंचम स्थानमें स्थित हों तौ हल योग होवे है सो भी तीन प्रकारसे होता है। जैसे दूसरे, छठे, दशम भावमें समस्त ग्रह स्थित हों तौ एक; और तीसरे, सातवें, ग्यारहवें भावमें दूसरा, और चौथे; आठवें, बारहवें भावमें तीसरा होता है। तिन पूर्व कहे भये गदादिक योगोंके क्रमसे फलकी प्राप्ति है। जो जन्म-समय गदायोग हो तो यज्ञकर्त्ता हो, शकटयाग हो तो गाडीसे जीविका करनेवाला हो, और विहंगयोग हो तो दूत हो, शृंगाटकयोग हो तो बहुतकाल सुख भोगनेवाला हो, आर हलयोग हो तो खेतीका कर्म करनेवाला हो ॥ ४ ॥

वज्रादियोगाः ।

क्रूरैः सुखकर्मस्थैः सौम्यैरुदयास्तसंस्थितैर्वज्रम् ॥
यव इति तद्विपरीतैर्मिश्रैः कमलं च्युतैर्वापि ॥ ५ ॥

समस्त कर पाप ग्रह सुख (चतुर्थ) और कर्म (दशम) भावमें स्थित हों और समस्त शुभ ग्रह उदय (लग्न) और अस्त (सप्तम) भावमें स्थित हों तो वज्रयोग होता है और तिन कहे भये स्थानोंसे विपरीत ग्रहोंकर यवयोग होवे है। अर्थात् चतुर्थ दशम भावमें समस्त शुभ ग्रह हों और लग्न, सप्तम भावमें समस्त-पापग्रह हों तो यवयोग होता है। और इन कहे भये स्थानोंपर सम-

Poona C LIBRARY

स्त मिले भये पाप ग्रह और शुभ ग्रह हों तौ कमलयोग होता है। अर्थात् वज्र वा यवयोग तो होवे नहीं। और समस्त ग्रह चारों केंद्रमें हों तो कमलयोग होवे है और केंद्रमें भ्रष्ट भये समस्त ग्रहोंकर वापीयोग होता है सो दो प्रकारका है जैसे द्वितीय, पंचम, अष्टम, एकादश भावोंमें समस्त ग्रह होवे तौ एक वापीयोग होवे और तृतीय, षष्ठ, नवम, द्वादश भावोंमें समस्त ग्रह स्थित हों तो दूसरा वापीयोग होवे है ॥ ५ ॥

लग्नादिकंटकेभ्यश्चतुर्ग्रहावस्थितैर्ग्रहैर्योगाः ॥
यूपेषुशक्तिदंडा वज्रादीनां फलान्यस्मात् ॥ ६ ॥

जो समस्त ग्रह लग्नादिक केंद्रोंमें लेकर चार स्थानोंमें स्थित हों तो क्रमसे यूप और इषु और शक्ति और दण्ड नाम योग होवे है। जैसे लग्न, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, भावोंमें समस्त ग्रह स्थित हों तो यूपयोग होता है। और जो चतुर्थ, पंचम, षष्ठ, सप्तम भावोंमें समस्त ग्रह हों तो इषुयोग होता है। और जो सप्तम, अष्टम, नवम, दशम भावोंमें समस्त ग्रह स्थित हों तो शक्ति योग होता है। और दशम, एकादश, द्वादश, लग्नभावमें समस्त ग्रह स्थित हों तो दण्ड-नाम योग होता है ॥ ६ ॥

वज्रादीनां फलम्।

आद्यंतयोः सुखयुतः सुखभाङ्मध्ये धनान्वितोऽल्पसुखः त्यागी हिंस्रो धनवर्जितः पुमान् प्रियैर्वियुक्तश्च ॥ ७ ॥

इसके पश्चात् वज्रादिकोंका फल कहते हैं:-यदि जन्मसमय वज्रयोग होवे तौ उत्पन्न भया पुरुष आद्य बाल अवस्था और अन्त वृद्ध अवस्था इनमें सुखी हो। और यवयोग होवे तौ बीचको तरुण अवस्थामें सुखी हो। और कमलयोग होवे तौ धनी हो। और वापी योग हो तो अल्प सुखी हो। और यूपयोग हो तो त्यागी हो और इषुयोग होवे तौ हिंसा करनेवाला हो और शक्तियोग होवे तौ निर्धनी पुरुष हो और दण्डयोग होवे तो प्रिय बन्धु पुत्रादिकोंकर वर्जित हो ॥ ७ ॥

नौकादियोगः ।

तद्वत्सप्तर्क्षस्थैर्नौकूटच्छत्रकार्मुकाणि स्युः ॥
नावाद्यैरप्येवं कंटकादिस्थैः स्मृतोऽर्धशशी ॥ ८ ॥

और तिसी प्रकार समस्त ग्रह केंद्रसे लेकर सात राशियोंपर स्थित हो तो क्रमसे नौका तथा कूट तथा छत्र तथा कार्मुक योग होवे हैं। अर्थात् लग्नसे लेकर लग्न, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ, सप्तम भावोंमें समस्त ग्रह स्थित हों तो नौकायोग होवे है। और चतुर्थसे लेकर चतुर्थ, पंचम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम भावोंमें समस्त ग्रह स्थित हों तो कूटनाम योग होवे है। और सप्तम भावसे लेकर लग्नपर्यन्त समस्त ग्रह स्थित हों तो छत्रनाम योग होवे है। और दशम भावसे लेकर चतुर्थ भाव पर्यन्त समस्त ग्रह स्थित हों तो कार्मुकयोग होवे है। और यदि नावादिक योगोंके समान समस्त ग्रह इस प्रकार कंटक भावोंमें स्थित हों तो अर्धचंद्रनाम योग होवे है, सो आठ प्रकारसे है। यदि द्वितीय भावसे लेकर अष्टम भावपर्यन्त समस्त ग्रह हों तो एक, और तृतीय भावसे लेकर नवम भावपर्यन्त दूसरा, पंचम भाव से लेकर एकादश भावपर्यन्त तीसरा, और षष्ठ भावसे लेकर द्वादश भावपर्यन्त चौथा, और अष्टम भावसे लेकर द्वितीय भावपर्यन्त पांचवां, और नवम भावसे लेकर तृतीय भावपर्यन्त छठा, और एकादश भावसे लेकर पञ्चम भावपर्यंत सातवां, और बारहवें भावसे लेकर षष्ठ भावपर्यंत आठवां होता है ॥ ८ ॥

चक्रसमुद्रयोगौ ।

एकांतरैर्विलग्नात्षड्भवनावस्थितैर्ग्रहैश्चक्रम् ॥
अर्थाच्च तद्वदुदधिर्नौप्रभृतिफलानि सर्वेषाम् ॥ ९ ॥

लग्नसे छः स्थानोंमें स्थित ऐसे एक एक स्थानके अन्तरवाले ग्रहोंकर चक्रयोग होवे है। और तिसी प्रकार द्वितीय स्थानसे लेकर छः स्थानोंमें स्थित ऐसे एक एक स्थानके अन्तरवाले ग्रहोंकर उदधिनाम

योग होवे है। अर्थात् जैसे लग्न, तृतीय, पंचम, सप्तम, नवम, एकादश इन छः स्थानोंमें जो समस्त ग्रह स्थित हों तो चक्रनाम योग होवे है। और द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादश भावोंमें समस्त ग्रह स्थित हों उदधिनाम योग होवे है। इसके अनंतर समस्त नौकादिक योगोंके फल हैं ॥ ९ ॥

नौकादियोगफलम्।

कीर्त्या युक्तोऽनृतवाक् स्वजनहितः शूरसुभगधनिभूपाः ॥ इत्याकृतिजा योगा विंशतिरात्मगुणैस्तेषु नन्दन्ते ॥ १० ॥

यदि जन्मसमय नौकायोग होवे तो कीर्तियुक्त हो, और कूट योग होवे तो झूठ बोलनेवाला हो, और छत्रयोग हो तो स्वजनोंका हितैषी हो, और कार्मुक योग हो तो शूरवीर हो, और अर्धचन्द्रयोग हो तो सुभग सुन्दर (भाग्यवाला) हो, और चक्रयोग होवे तो धनी हो, और उदधि (समुद्र) योग होवे तो राजा हो इस प्रकार आकृतियोगसे उत्पन्न वीस योग कहैं। तिन योगोंके विषे उत्पन्न भये प्राणी अपने गुणोंकर आनन्द भोगते हैं ॥ १० ॥

सांख्ययोगाः।

एकादिग्रहोपगतैरुक्तान्योगान्विहाय संख्याने ॥ गोलयुगशूलकेदारपाशदामाख्यवीणाः स्युः ॥११॥

इसके अनन्तर संख्यायोगोंको कहते हैः-संख्यामें कहे भये योगोंको त्यागकर यदि समस्त ग्रह एक राशि आदिक स्थानोंपर स्थित हों तो क्रमसे गोल तथा युवा तथा शूल तथा केदार तथा पाश तथा दाम तथा वीणानाम योग होते हैं। भाव यह है कि इन रज्जुमुशलादिक समुद्रपर्यंत योगोंमेंसे तो कोई योग होवे नहीं और यदि एक राशिपर समस्त ग्रह हरे तो गोलयोग होता है। और यदि दो राशिपर समस्त ग्रह हों तो युगनामयोग होवे है। और तीन राशियोंपर हों तो शूल योग होता है। और चार राशिपर हो तो केदारयोग होता है और

पाँच राशिपर हो तो पाशयोग होता है । और यदि छः राशिपर हो तो दामसंज्ञक योग होता है । और यदि समस्त ग्रह सात राशिपर हों तो वीणानाम योग होवे है ॥ ११ ॥

सांख्ययोगफलं द्वौ योगौ चेत्कस्य फलं ग्राह्यम् ।

दुःखितदारिद्र्यघातुककृषिकरदुःशीलपशुपालनिपुणानाम्॥जन्मक्रमेण सुखिनःपरभाग्यैः सर्व एवैते॥१२॥

दुःखी तथा दरिद्री तथा हिंसक तथा खेती करनेवाला तथा दुःशील तथा पशुओंका पालनेवाला तथा चतुर इन पुरुषोंका क्रमसे इन योगोंके विषे जन्म होवे है । संख्यायोगमें उत्पन्न भये सब ही पुरुष पराये भाग्योंकर सुखी होते हैं[1] ॥ १२ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेवात्मजकाशिरामविरचितभाषाटीकायां नाभसयोगाऽध्यायः ॥ ११ ॥

स्त्रिया आकारलक्षणम् ।

अथ द्वादशोऽध्यायः ।

स्त्रीपुंसोर्जन्मफलं तुल्यं किंत्वत्र जन्मलग्नस्थम् ॥ तद्भलयोगाद्रूपाकृतिश्च सौभाग्यमस्तमये ॥ १ ॥

इसके अनन्तर स्त्रीजातकाध्याय निरूपण किया जाता है:-स्त्री और पुरुषोंका जन्म फल करके समान है । अर्थात् जैसा पुरुषको जन्मका शुभाशुभ फल होता है तिसी प्रकार स्त्रीको शुभाशुभ फल होता है । परन्तु इस स्त्रीजातकमें जन्म और लग्नमें स्थित भये राशिको विचारे । अर्थात् स्त्रियोंके जन्मसमय चंद्रमाका राशि और लग्नका राशि विचारे । और उस चंद्रमाके राशि और लग्नके राशिके

१ एक ही चर वा स्थिर वा द्विस्वभाव राशिपर समस्त ग्रह हों तो रज्जु, मुशल,नलादिक योगोंमेंसे निश्चय ही एक योग होवेगा परन्तु,इनमेंसे एक भी योग नहीं माना जायगा कारण कि विना अवकाशवाले विधि अवकाशवाले विधियोंकोबाधाकरतेहैं इस न्यायसे संख्यायोगकर आश्रययोग बाधितभया-

बलके योगसे स्त्रियोंका शरीर और आकृति स्वरूप विचारे और अस्तमय (सप्तम) भावमें सौभाग्यता विचारे। यदि सप्तम भाव शुभग्रहयुक्त हो तो सौभाग्यवती कहे। और अशुभ ग्रहयुक्त हो तो दुर्भाग्यवती कहे ॥ १ ॥

युग्मर्क्षे लग्नेंद्वोः प्रकृतिस्था रूपशीलगुणयुक्ता ॥
ओजे पुरुषाकारा दुःशीला दुःखिता चैव ॥ २ ॥

जो लग्न और इन्दु (चन्द्रमा) का युग्मर्क्ष अर्थात् समराशि वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन हों तो उत्पन्न भई, स्त्री स्त्रीस्वरूप और शीलगुणक्त हो।यदि विषम राशि होवे तो पुरुषरूप,दुःशील और दुःखित होवे। और यदि लग्न और चन्द्रमामेंसे एक तो सम राशिपर स्थित हो और एक विषम राशिपर स्थित हो तो मध्यमरूप तथा मध्यम गुण स्त्री हो ॥ २ ॥

पतिस्वरूपम् ।

अबले सप्तमभवने सौम्येक्षणवर्जिते च कापुरुषः ॥
भवति पतिश्चरभेऽस्ते प्रवासशीलो भवेद् भ्रांती ॥३॥

और जिस स्त्रीके जन्मसमय लग्नसे सप्तम स्थान निर्बली हो और शुभ ग्रहोंके योग तथा दृष्टिसे वर्जित हो तो उस स्त्रीका पति कापुरुष अर्थात् निन्दित पुरुष हो। और अस्त (सप्तम) भावमें चरराशि मेष, कर्क, तुला, मकर हो तो उत्पन्न भई स्त्रीका पति भ्रमण करनेवाला तथा प्रवासशील हो। और स्थिरराशि वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ सप्तम भावमें हों तो उत्पन्न भई स्त्रीका पति सदाही घरमें

--क्योंकि गोलयोग होनेका और उपाय नहीं है और यदि दलयोग और संख्यायोगोंका योग पाया जावे तौ तिनमें दलयोग प्रबल होता है। और आकृतियोग और और आश्रययोगोंका योग पाया जावे तो आकृतियोगका फल होता है। और यदि संख्यायोग और आश्रययोग और आकृतियोगोंका योग पाया जावे तो आकृतियोग प्रबल होते हैं। ये नाभसादिकयोग समाप्त दशाओंमें फलदायक होवे हैं।

रहनेवाला हो । और द्विस्वभाव राशि मिथुन, कन्या, धनु, मीन सप्तम भावोंमें हों तो उत्पन्न भई स्त्रीका पति मिला भया फल कहे॥३॥

विधवादिलक्षणम् ।

बाल्ये विधवा भौमे पतिसंत्यक्ता दिवाकरेऽस्तस्थे ॥
सौरे पापैर्दृष्टे कन्यैव जारं समुपयाति ॥ ४ ॥

जिस स्त्रीके जन्मलग्नसे भौम (मंगल) अस्त (सप्तम) स्थानमें स्थित हो तो बालपनमेंही विधवा हो, और दिवाकर (सूर्य) सप्तम भावमें बैठा हो तो पतिकरके त्यागी जावे, आर शनैश्चर सप्तम भावमें स्थित हो और पापग्रहोंने देखा हो तो कन्या अक्षताही जारपतिका सेवन करे ॥ ४ ॥

ब्रह्मवादिनीस्त्रीलक्षणम् ।

सितकुजजीवेंदुसुतैर्बलिभिर्लग्ने समश्च यदि राशिः ॥
स्त्रीब्रह्मवादिनी स्याद्धरिशास्त्रकुशला प्रतीता च ॥ ५ ॥

और यदि लग्नमें समराशि हो और बलवान् सित (शुक्र), कुज (मंगल), जीव (बृहस्पति), इन्दुसुत (बुध) इन ग्रहोंकर युक्त हो तो उत्पन्न भई स्त्री ब्रह्मवादिनी, मोक्षशास्त्रमें चतुर और विख्यात होवे है ॥ ५ ॥

स्त्रियाः फलासंभवे भर्तुः फलम् ।

पुंजन्मफलं यद्यन्न घटति वनितासु पतिषु तत्तासाम् ॥
वक्तव्यं राज्याद्यं वृषणविनाशादि वा पापम् ॥ ६ ॥

यदि स्त्रियोंके विषे जो जो पुरुषोंके जन्मके फल शुभ राज्यादिक और पाप वृषणविनाशादिक न घटते हों सो सो तिन स्त्रियोंके पतियोंके विषे कहना । भाव यह है कि जो फल भावोक्त स्त्रियोंमें न घटता हो वह उनके पतियोंके विषे कहना । जैसे स्त्रीके राजयोग होवे वा वृषणविनाशादिक योग होवे तो यह उनके पतियोंके विषे कहे ॥ ६ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचितभाषाटीकायां स्त्रीजातकाध्यायः ॥ १२ ॥

त्रयोदशोऽध्यायः।

अष्टमस्थग्रहमृत्युज्ञानम्।

सूर्यादिभिर्निधनगैर्हुतवहसलिलायुधज्वरामयजः ॥
क्षुत्तृट्कृतश्च मृत्युः परदेशे नैधने चरभे ॥ १ ॥

इसके अनन्तर नैर्याणकाध्याय निरूपण किया जाता है:- जिसके जन्मसमयमें सूर्यादिक ग्रह लग्नसे नैधन (अष्टम भाव) में स्थित हों तो क्रमसे हुतवह (अग्नि), सलिल (जल), आयुध (शस्त्र), ज्वर, आमय (जीर्णादिक रोग) इनसे उत्पन्न भया तथा क्षुधा तृष्णाका किया भया मृत्यु कहे। अर्थात् जिसके जन्मलग्नसें सूर्य अष्टम भावमें स्थित हो तो उसका अग्नि हेतुक मृत्यु कहे। और चन्द्रमा हो तो जलहेतुक मृत्यु कहे। मंगल हो तो शस्त्रहेतुक मृत्यु कहे। और बुध हो तो ज्वरहेतुक मृत्यु कहे। और बृहस्पति हो तो जीर्णरोगादिहेतुक मृत्यु कहे। और शुक्र हो तो क्षुधाहेतुक मृत्यु कहे और शनैश्चर हो तो तृष्णाहेतुक मृत्यु कहे। और यदि बहुत ग्रह अष्टम भावमें बैठे हों तो बली ग्रहके हेतुसे मृत्यु कहे और यदि नैधन (अष्टम भाव) में चरराशि हो तो परदेशमें मृत्यु कहे। और स्थिर राशि हो तो स्वदेशमें मृत्यु कहे। और द्विस्वभाव राशि हों तो मार्गमें मृत्यु कहे॥ १॥

ग्रहदृष्ट्या मृत्युज्ञानम्।

यो बलवान्निधनं पश्यति तद्धेतुकोपजो मृत्युः ॥
लग्नात्त्र्यंशस्य पतिर्द्वाविंशः कारणं मृत्योः ॥ २ ॥

और जिसके अष्टम भावमें कोई ग्रह न होवे तो उसके मृत्युका ज्ञान कहते हैं:-जो बलवान् ग्रह निधन (अष्टम) भावको देखता हो तो उस धातुकोपसे मृत्यु हो। और यदि सूर्य अष्टम भावको देखता हो तो पित्तकोपकर मृत्यु कहे और चन्द्रमा देखता हो तौ कफवात-कोपकर मृत्यु कहे। और मंगल देखता हो तो पित्तकोपकर मृत्यु

कहे । और बुध देखता हो तो वातपित्तकफकोपकर मृत्यु कहे । और बृहस्पति देखता हो तो कफकोपकर मृत्यु कहे और शुक्र देखता हो तो कफवातप्रकोपकर मृत्यु कहे । और शनैश्चर देखता हो तो वातकोपकर मृत्यु कहे । और जिसके जन्मलग्नसे अष्टम स्थान किसी ग्रहकर युक्त वा देखा न हों तो उसका मृत्युज्ञान कहते हैं । लग्नसे बाइसवें द्रेष्काणका स्वामी मृत्युका कारण है । भाव यह है कि लग्नमें जो द्रेष्काण हो उससे बाईसवां जो द्रेष्काण है उसके स्वामीका जो अग्न्यादिक कारण है वही मृत्युका कारण है ॥ २ ॥

देवलोकादिगतिज्ञानम् ।

सुरपितृर्यतिङ्नरकान् गुरुरिंदुसितावसृग्रवीज्ञयमौ ॥
रिपुरंध्रत्र्यंशकपा नयंति चास्तारिनिधनस्थाः ॥ ३ ॥

गुरु (बृहस्पति), इन्दु (चंद्रमा), सित (शुक्र), असृक् (मंगल), रवि (सूर्य), ज्ञ (बुध), यम (शनैश्चर) ये रिपु (छठे) रंध्र (आठवें) स्थानके द्रेष्काणके स्वामी हों अथवा अस्त (सप्तम) भाव वा अरि (षष्ठ) भाव वा निधन (अष्टम) भावपर स्थित हों तौ क्रमसे देवता लोक तथा पितृ लोक तथा तिर्यक्लोक तथा नरलोकोंके प्रति उत्पन्न भये प्राणीको ले जाते हैं । भाव यह है कि जो छठे वा आठवें भावके द्रेष्काणके स्वामी छठे वा सातवें वा आठवें भावमें बृहस्पति स्थित हो तो उत्पन्न भया प्राणी मृत्युके पीछे देवलोक पाता है । और चन्द्रमा वा शुक्र हों तो पितृलोक पाता है और सूर्य वा मंगल हों तो तिर्यक्लोक पाता है । बुध वा शनैश्चर हो तो नरकलोक पाता है । यदि षष्ठ वा अष्टम भावके द्रेष्काणके स्वामी भिन्न भिन्न हों तो उनमें जो बली हो उसका लोक उत्पन्न भया प्राणी मरनेके पीछे पाता है । परन्तु छठे वा अष्टम भावका द्रेष्काण उसी क्रमसे जानना चाहिये । जिस प्रकार कि लग्नका द्रेष्काण है । और यदि छटे वा सातवें वा आठवें भावोंमें बहुतसे ग्रह स्थित हों तो उनमें जो बली हों उससे मृतकलोक निश्चय करे ॥ ३ ॥

मोक्षगतिज्ञानम्।

षष्ठाष्टमकंटकगो६।८।१।४।७।१०गुरुरुच्चो भवति मीनलग्ने वा॥शेषैरबलैर्जन्मनि मरणे वा मोक्षगतिमाहुः ॥४॥

इसके अनन्तर मोक्षज्ञान कहते हैं:-जिसके जन्ममें उच्चका होकर बृहस्पति लग्नसे छठे वा आठवें वा कंटक लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भावोंमें स्थित होवे अथवा जन्मके समय मीन लग्न होवे वा बृहस्पतिके त्यागकर और ग्रह निर्बली हो तो पंडितजन उस पुरुषका मोक्ष कहते हैं४

जातो जन्तुः कस्माल्लोकादागत इति ज्ञानम्।

गुरुरुडुपतिशुक्रौ सूर्यभौमौ यमज्ञौ विबुधपितृतिरश्चो नारकीयांश्च कुर्युः॥ दिनकरशशिवीर्याधिष्ठितत्र्यंशनाथाः प्रवरसमनिकृष्टांस्तुंगह्रासादनूके ॥ ५॥

दिनकर (सूर्य) और शशी (चन्द्रमा) इनमें जो वीर्य अधिष्ठित अर्थात् वीर्यवान् है इसके द्रेष्काणके स्वामी गुरु (बृहस्पति) हो और उडुपति (चन्द्रमा) वा शुक्र हो और सूर्य वा भौम (मंगल) हो और यम (शनैश्चर) वा ज्ञ (बुध) हो तो क्रमसे देवता और पितृ और तिर्यक् और नारकीय पुरुषोंका जन्म करते हैं। भाव यह है कि सूर्य चन्द्रमामें जो बली हो उसके द्रेष्काण राशिके स्वामी बृहस्पति हो तो देवलोकसे आया भया प्राणी कहे। और चन्द्रमा वा शुक्र हो तो पितृलोकसे आया भया कहे। और मंगल वा सूर्य हो तो तिर्यक् लोकसे आया भया कहे। और शनैश्चर वा बुध हो तो नरकलोकसे आया भया प्राणी कहे। परन्तु तिसमें भी देव, पितृ, तिर्यक्, नारकी कुलमें ग्रहोंकी उत्तमता तथा हीनता कर श्रेष्ठ तथा सम तथा अधम कहे। भाव यह है कि जो ग्रह उच्चका हो और उसका जो लोक है उसमें उस उत्पन्न भये प्राणीको उत्तम कहे। और जो उच्च राशिसे भ्रष्ट होकर नीच राशिको प्राप्त न भया हो तो उस ग्रहका जो लोक है उसमें उस पुरुषको मध्यम कहे नीचका हो तो उस लोकमें उस पुरुषको नीच कहे ॥५॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचितभाषाटीकायां नैर्याणकोऽध्यायः ॥ ॥ १३ ॥

अथ चतुर्दशोऽध्यायः ।

नष्टजातकानयनम् ।

गोसिंहौ जितुमाष्टमौ क्रियतुले कन्यामृगौ च क्रमात्संवर्ग्या दशकाष्टसप्तविषयैः शेषाः स्वसंख्यागुणाः ॥ जीवारास्फुजिदैंदवाः प्रथमवच्छेषा ग्रहाः सौम्यवद्राशीनां नियतोविधिर्ग्रहयुतैः कार्या च तद्वर्गपे ॥ १ ॥

इसके अनन्तर नष्टकाध्याय निरूपण किया जाता है:—जो प्रश्न समय गो (वृष),सिंह और जितुम(मिथुन) और अष्टम(वृश्चिक) और क्रिय (मेष) और तुला और कन्या और मृग (मकर) लग्न होवे तो क्रमसे दश (१०), अष्ट (८), सप्त (७), विषय (५) इन अंकोंकर गुणे अर्थात् प्रश्न समय वृष वा सिंह लग्न हो तो उस लग्नके राशिके अंकको १० से गुणा करे, और मिथुन वा वृश्चिक होवे तो आठसे गुणा करे, और मेष वा तुला होवे तो ७ से गुणा करे, और कन्या और मकर होवे तो ५ से गुणा करे और यदि प्रश्न समय शेष कर्क, धनु, कुम्भ, मीन लग्न हों तो उस लग्नके राशिके अंकको अपने अंककी संख्या कर गुणे । अर्थात् कर्क लग्न हो तो लग्नके राशि अंक ४ से गुणे, धनु होवे तो ९ से, कुम्भ हो तो ११ से,मीन हो तो १२ से गुणे । यह राशियोंके गुणनेका विधि निश्चय किया है । और यदि वह राशि ग्रहोंकर युक्त हो तो तिन ग्रहोंका भी गुणन करे । जो लग्नमें जीव (बृहस्पति), और (मङ्गल), आस्फुजित (शुक्र) ऐन्दव (बुध) युक्त हों तो उस लग्नके राशि अंकोंकी फिर पहिले समान गुणे । अर्थात् यदि लग्नमें बृहस्पति हो तो उस लग्नके राशिके अंकको दशसे गुणे और मंगल हो तो आठसे गुणे और शुक्र हो तो ७ से गुणे, बुध हो तो पांचसे गुणे, और यदि लग्नमें शेष ग्रह सूर्य वा चन्द्रमा वा शनैश्चर हों तो फिर उस लग्नके राशिके अंकको

सौम्य (बुध) के समान अर्थात् ५ से गुणे। भाव यह है कि प्रश्नके समय जिस लग्नके जितने राशि अंश कला बीते हों उन सबकी कलारूप पिण्ड करे फिर उस पिण्डको यदि प्रश्नका मेष लग्न हो तो ७ गुणे, वृष हो तो १० से गुणे, मिथुन हो तो ८ से गुणे, कर्क हो तो ४ से गुणे, सिंह हो तो १० से गुणे, कन्या हो तो ५ से गुणे, तुला हो तो ७ से गुणे, वृश्चिक हो तो ८ से गुणे, धन हो तो ९ से गुणे, मकर हो तो ५ से गुणे, कुम्भ हो तो ११ से गुणे, मीन हो तो १२ से गुणे। फिर लग्नके राशिके अंकसे गुणे हुए पिण्डको यदि प्रश्नलग्नमें सूर्य हो तो ५ से फिर गुणे, और चंद्रमा हो तो ५ से फिर गुणे मंगल हो तो ८ से फिर गुणे, बुध हो तो ५ से फिर गुणे, बृहस्पति हो तो १० से फिर गुणे, शुक्र हो तो ७ से फिर गुणे, और शनैश्चर हो तो ५ से फिर गुणे। जो लग्नसे एक ग्रह हो तो एक ग्रहके अंकोंसे गुणे, और जो बहुत ग्रह हों तो उन सब ग्रहोंके अंकोंसे गुणे। इस प्रकार गुणे हुए पिण्डको एक जगह रखे ॥ १ ॥

नक्षत्रानयनम्।

सप्ताहतं त्रिघनभाजितशेषमृक्षं दत्त्वाथ वा नवकदानविशोधनाभ्याम् ॥ एवं कलत्रसहजात्मजशत्रुभेभ्यः प्रष्टुर्वदेदुदयराशिवशेन तेषाम् ॥ २ ॥

फिर वह गुणा भया पिण्ड ७ से गुणा करे, तदनन्तर नौका जोड तथा शोधन करके फिर त्रिघन (सत्ताईस) के भागसे शेष बचेकी नक्षत्रसंज्ञा है। भाव यह है कि प्रथम प्रकारसे गुणे भये पिण्डको ७ से फिर गुणे। और यदि प्रश्नलग्नमें पहिला द्रेष्काण हो तो ९ और जोडे। और यदि द्वितीय द्रेष्काण होवे तो न जोडे न शोधे। और यदि तीसरा द्रेष्काण हो तो ९ घटा दे फिर २७ से भाग ले जो शेष बचे उसको अश्विनी गिने, जो नक्षत्र आवे वह प्रश्नकर्ताके जन्मका नक्षत्र कहे। इस प्रकार ही कलत्र (सप्तम) और सहज (तृतीय) और आत्मज (पंचम) और शत्रु (षष्ठ) इन स्थानोंकी राशियोंसे उदय राशियोंके वशकर तिन स्त्री भ्रातृपुत्र शत्रुओंके जन्मनक्षत्रादिक पूछनेवालेसे कहे। भाव यह है कि प्रश्नकर्ता अपनी स्त्रीका

जन्मनक्षत्र पूछे तो तात्कालिक लग्नमें ६ युक्त करनेसे जो राशि हो उस राशिका ही तत्काल लग्न कल्पना करे, फिर उसके बीते भये राशि अंश कलाओंका एक पिण्ड कर राशि गुणाकारसे गुणे, और जो ग्रह युक्त हो तो उस ग्रहके गुणाकारसे गुणाकर तदनन्तर ७ से फिर गुणे, फिर पूर्वप्रकारसे ९ का जोड तथा शोधन कर २७ का भाग दे शेष बचे अंकको अश्विनीसे गिने जो आवे वह नक्षत्र उस प्रश्नकर्ताकी स्त्रीके जन्मका कहे। जो प्रश्नकर्ता भ्राताके नक्षत्रको पूछे तो तात्कालिक लग्नमें २ जोडकर पूर्वरीतिके अनुसार प्रश्नकर्ताके भ्राताका जन्मनक्षत्र कहे। और यदि प्रश्नकर्ता पुत्रका जन्मनक्षत्र पूछे तो तात्कालिक लग्नमें ४ जोडकर पूर्वरीतिसे प्रश्नकर्ताके पुत्रका जन्मनक्षत्र कहे। और यदि मित्रका जन्मनक्षत्र पूछे तो तात्कालिक लग्नमें ३ जोडकर पूर्वरीतिके अनुसार प्रश्नकर्ताके मित्रका जन्मनक्षत्र कहे। और यदि शत्रुका जन्मनक्षत्र पूछे तो तात्कालिक लग्नमें ५ जोडकर पूर्वरीतिके अनुसार प्रश्नकर्ताके शत्रुका जन्मनक्षत्र कहे। इसी प्रकार स्त्री, भ्रातृ, पुत्र, मित्र, शत्रु, आदिकोंका समस्त नष्टजातक कहे ॥ २ ॥

ऋतुमासाद्यानयनम्।

वर्षर्तुमासतिथयो द्युनिशं ह्युडूनि वेलोदयर्क्षनवभाग-विकल्पनाद्याः ॥ भूयो दशादिगुणिता स्वविकल्प-भक्ता वर्षादयो नवकदानविशोधनाभ्याम् ॥ ३ ॥

इस प्रकार वर्ष, ऋतु, मास, तिथि, दिन, रात्रि, नक्षत्र, काल, लग्न, राशि, नवांशक विकल्पनादिक जाने। पहिली प्रकार राशिके कला संज्ञके पिण्डको राशिके गुणाकार अंकसे गुणे तदनन्तर जो ग्रहलग्नमें स्थित हो उसके गुणाकार अंकसे गुणे तदनन्तर उस कला संज्ञक पिण्डक गुणनफलको पृथक् २ चार स्थानोंमें रक्खे। फिर क्रमसे दशादिक संख्या दश, आठ, सात, पांच कर गुणे। अर्थात् पिण्डका जो गुणन प्रथम स्थानमें रक्खा है उसको १० से गुणे, और जो दूसरे स्थानमें रक्खा है उसको आठसे गुणे ओर जो तीसरे स्थानमें रक्खा है उसको ७ से गुणे, और जो चौथे स्थानमें रक्खा है उसको पांच से गुणे। जो प्रश्न समय प्रथम द्रेष्काण हो तो चारों स्थानोंके

गुणनफलके अंकोंमें ९ और जोड दे और यदि दूसरा द्रेष्काण हो तो यथावत् चारों स्थानोंके गुणनफलके अंकोंको रहने दे, और यदि तासरा द्रेष्काण हो तो चारों स्थानोंके गुणनफलके अंकोंमेंसे ९ घटा देवे। इस प्रकार नौका जोड तथा शोधन कर अपने अपने विकल्पोंकर भाग दे शेष बचे हुए अंक क्रमसे वर्षादिक जाने ॥ ३ ॥

विज्ञेया दशकेष्वब्दा ऋतुमासास्तथैव च ॥
अष्टकेष्वपि मासार्धतिथयश्च तथा स्मृताः ॥ ४ ॥

प्रथम स्थानमें पिण्डके अंक १० से गुणे हैं उनमें वर्ष, ऋतु, मास जाने। अर्थात् जो प्रथम स्थानमें पिण्डके अंक १० से गुणे हैं उनमें पूर्व प्रकारसे नाका जोड तथा शोधन कर १२० का भाग दनस जो शेष बचें उन्हीं अंकोंके समान जन्मसे बीते भये वर्ष कहे। और ६ का भाग देनेसे जो अंक शेष रहे उस अंकके समान शिशिर ऋतु से लेकर जन्मका ऋतु कहे। और दोका भाग देनेसे जो एक अंक बचे तो उस ऋतुके प्रथम मासमें जन्म कहे और शून्य बचे तो उस ऋतुका दूसरा जन्म मास कहे। और जो दूसरे स्थानमें पिण्डके अंक ८ से गुणे हैं उनमें तिसी प्रकार पक्ष तथा तिथि कही है अर्थात् जो दूसरे स्थानमें पिण्डके अंक ८ से गुणे हैं उनमें पूर्व प्रकारसे ९ का जोड तथा शोधन कर २ का भाग देनेसे १ बचे तो शुक्लपक्ष जाने और शून्य बचे तो कृष्णपक्ष जाने, १५ का भाग देनेसे जो शेष बचा है उस अंकके समान परिवासे लेकर तिथि जाने ॥ ४ ॥

दिवारात्रिप्रसूतिं च नक्षत्रानयनं तथा ॥
सप्तसंख्येऽपि वर्गे तु नित्यमेवोपलक्षयेत् ॥ ५॥

और जो वर्ग ७ से गुणा किया है उसमें दिन रात्रिको जन्म तथा नक्षत्रज्ञान सदाही देखे। अर्थात् जो तृतीय स्थानमें पिण्डके अंक ७ से गुणे हैं उनमें पूर्व प्रकार से ९ का जोड तथा शोधन कर २ का भाग देने से यदि एक बचे तो दिनका जन्म कहे। और यदि शून्य बचे तो रात्रिका जन्म कहे। और २७ के भाग देनेसे जो अंक बचे उस अंकके समान अश्विनीसे लेकर नक्षत्र कहे ॥ ५ ॥

जन्मकालादिज्ञानम् ।

वेलामथ विलग्नं च होरामंशकमेव च ॥
पञ्चकेषु विजानीयान्नष्टजातकसिद्धये ॥ ६ ॥

और जो पिण्डके अंश ९ से गुणे हैं उनमें वेला काल तथा लग्न तथा होरा तथा नवांशकोंको नष्टजातककी सिद्धिके लिये बुद्धिमान् ज्योतिषी कहे । अर्थात् जो चतुर्थ स्थानमें पिण्डके अंक पांच से गुणे हैं उनमें पूर्व प्रकारसे ९ का जोड तथा शोधन करे जो दिनमें जन्मभया हो तौ ऋतु मासके अनुसार जितना दिनमान निश्चय भया हो उसका भाग देनेसे- जो शेष बचे उतनीही जन्मसमय दिनकी गत घडी जाने और यदि रात्रिमें जन्म हो तो ऋतुमासके अनुसार जितना रात्रिमान हो उसका भाग देनेसे जो शेष बचे उतनीही जन्मरात्रिकी गत घडी जाने । इस प्रकार कालके जाननेपर तात्कालिक लग्न स्पष्टकरे फिर तिस लग्नका होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांशक, त्रिंशांशक भाग करने चाहिये । तदनन्तर तात्कालिक ग्रह स्पष्ट करने चाहिये । तदनन्तर पूर्व कहे भये प्रकार कर दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग करने चाहिये फिर उनका फल भी पूर्वरीतिसे कहे । इस प्रकार ज्योतिषी प्रश्नलग्नसे नष्टजातकको सिद्धकरे ॥ ६ ॥

यैर्नाधीतं गुरोः शास्त्रं ज्योतिषं ज्योतिषाम्बुधेः ।
तज्जनोपकृतयेऽस्मिन् तिलकं लघुजातके ॥ १ ॥

इति श्रीलघुजातके श्रीपाठकमंगलसेनात्मजकाशिरामविरचित-भाषाटीकायां नष्टजातकाध्यायः समाप्तः ॥ १४ ॥

छन्द–ढाडोलीग्राम सुवास शंभलपास द्विजगणविभूषितम् ।
जहँ वसत मंगलसेनसुत सतकुलकमलप्रतिभासितम् ॥
श्रीकाशिराम सुनाम हरिपदपद्म निज उर धारिके ।
तिन रच्यो लघुजातकतिलक उपकार जग चित मानिके ॥
कल्याणपुर कल्याण कारक वैश्य गंगाविष्णुने ।
मुद्रित कियो विस्तार कर अधिकार ले यशकारने ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–

खेमराज श्रीकृष्णदास,
अध्यक्ष–"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
बम्बई.

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
अध्यक्ष-"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
कल्याण-बम्बई.